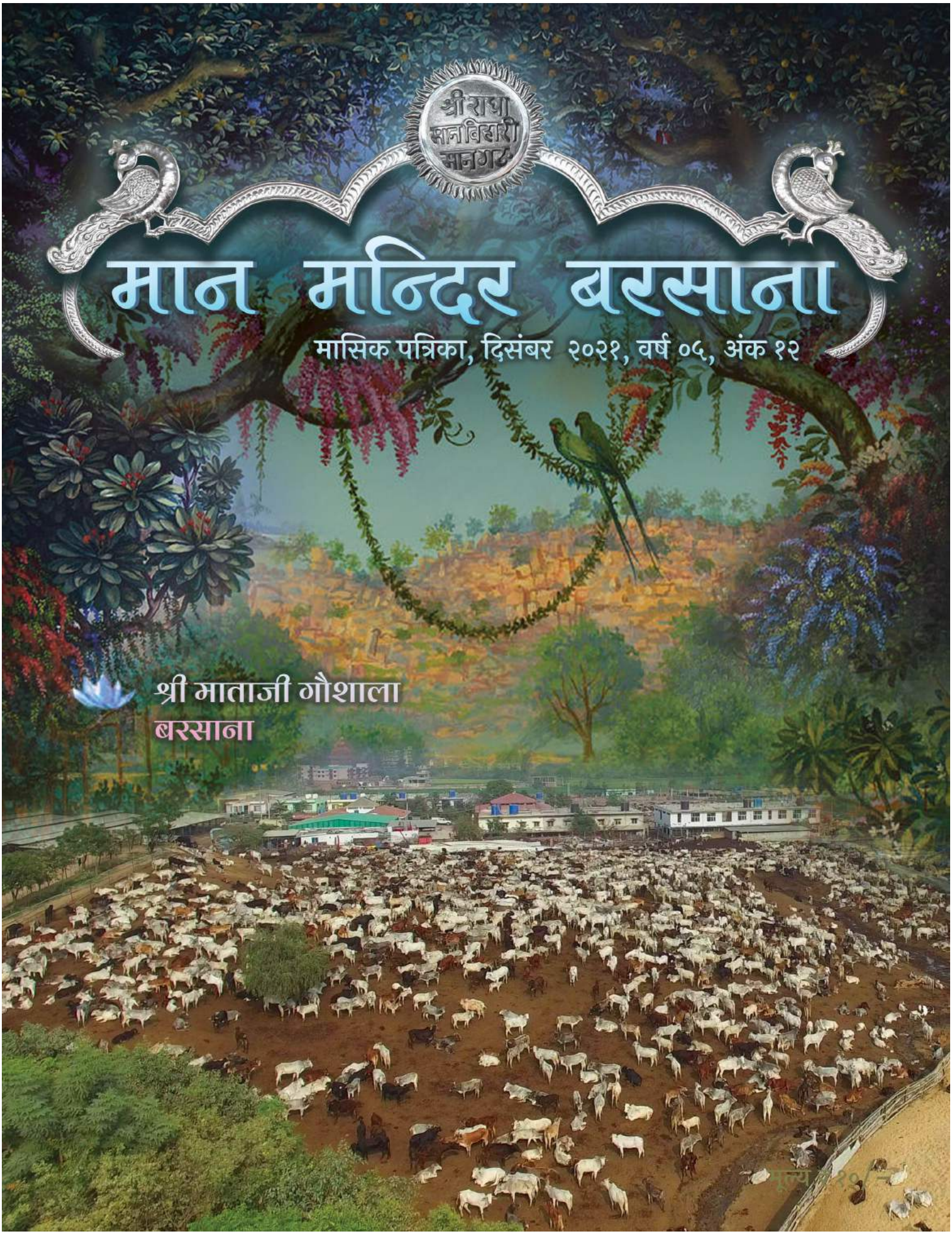

श्री राधा मानबिहारी मानगढ़
मान मन्दिर बरसाना
मासिक पत्रिका, दिसंबर २०२१, वर्ष ०५, अंक १२
श्री माताजी गौशाला
बरसाना
मूल्य २०/-

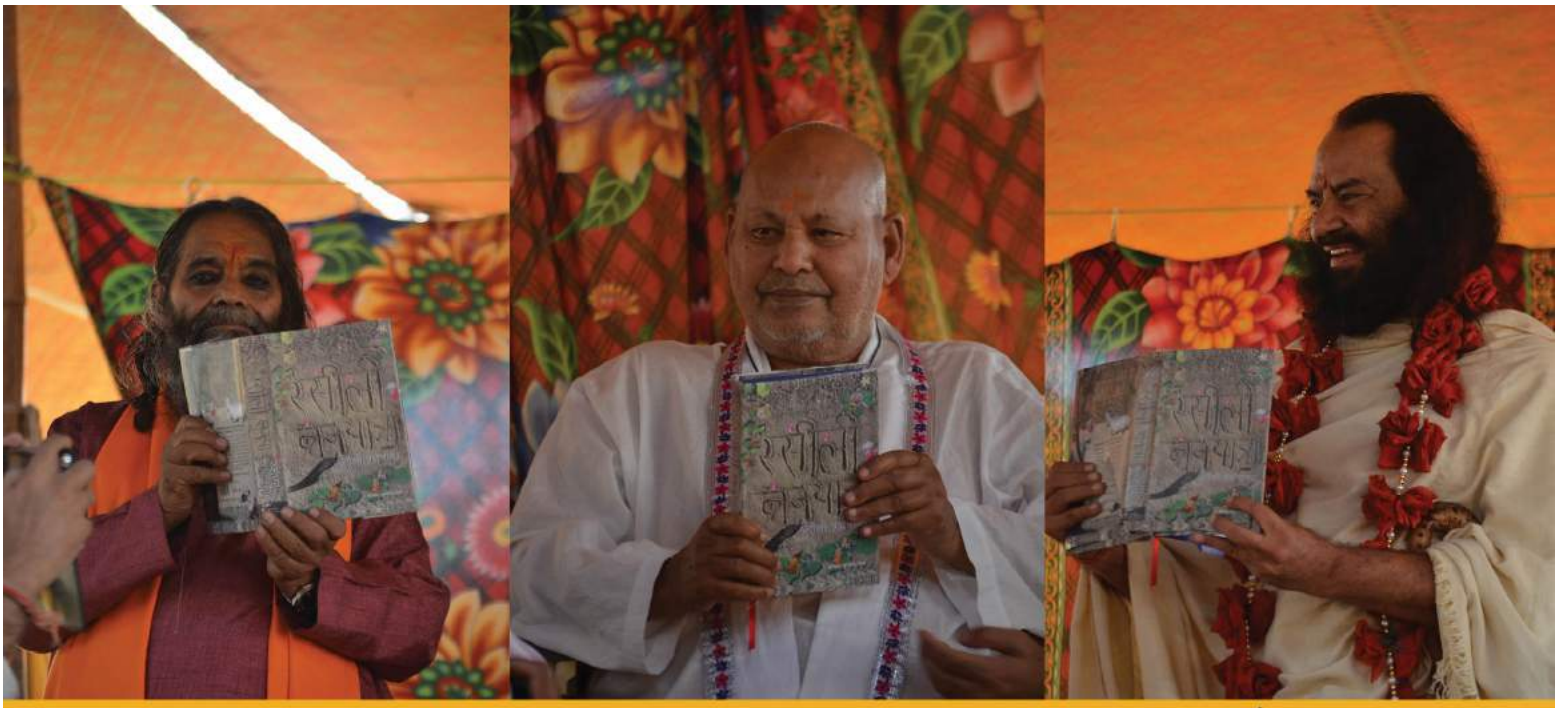

पूज्य बाबाश्रीजी (मध्य), श्री हरि चैतन्य पुरी जी (काम्यवन) एवं डॉ श्री रामजी लाल शास्त्री जी (बाएँ) द्वारा ब्रजरस सागर "रसीली ब्रजयात्रा" पुस्तक के गुजराती संस्करण का विमोचन।

अनुक्रमणिका

विषय- सूची **पृष्ठ- संख्या**

१ 'गौ-धन' से ही होगा समृद्धशाली भारत..०३
२ 'अध्यात्म' का प्रेरक 'गौवंश'.....०५
३ भारत की आत्मा 'ब्रजभूमि'.....०७
४ ब्रज-धरोहर 'वन-सम्पदा'.....०९
५ नित्य सहज भावमय 'भक्तजन'.....११
६ परमकृपामयी 'श्रीसहचरियाँ'.....१३
७ वैराग्य-वृत्ति से ही वास्तविक भजन१५
८ प्रेम की पराकाष्ठा 'सर्वात्मसमर्पण'..१७
९ संयम से ही भक्ति सम्भव १९
१० असली शरणागति में अनन्त शक्ति २१
११ विकारों की जड़ 'प्रमदा'.....२३
१२ 'नियत आहार' से असली आराधना.....२६
१३ समत्व से सुसंस्कार.....२९
१४ विशुद्ध भक्ति 'निष्किञ्चन-भाव'.....३१

याद आई रे श्याम तेरी आई रे

याद आई रे, श्याम तेरी आई रे, हाँ याद आई रे ॥

*** देखो एक दिना हम जाय रही,**
जब तुमने हँस इक बात कही,
तू आई है कहाँ ते आई रे, हाँ याद आई रे ।

*** देखो वे बतियाँ जिय आय रहीं,**
जब तुमने हमरी बांह गही,
भर आयी रे आँख भर आई रे, हाँ याद आई रे ।

*** देखो जब हम जमुना न्हाय रहीं,**
तब तुमने हमरी चीर गही,
वे बतियाँ क्यों बिसराई रे, हाँ याद आई रे ।

*** देखो जब हमरे सिर मांट दही,**
हम तुमको दही पिवाय रही,
दही कारण तुम्हें नचाई रे, हाँ याद आई रे ।

*** देखो वृन्दावन जमुना तट पै,**
जब रास रच्यो वंशीवट पै,
तब संग-संग हमें नचाई रे, हाँ याद आई रे ।

— पूज्यश्री बाबा महाराज कृत

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो |
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो |
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो |

— **पूज्यश्री बाबा महाराज कृत**

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल

प्रकाशक – **राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,**
गहवरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)
(Website :www.maanmandir.org)
(E-mail :info@maanmandir.org)
mob. Radhakant Shastri 9927338666
Brajkishordas.....6396322922

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८:०० से ९:०० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले |"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकाले व मासिक, त्रेमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवा द्रव्य किसी विश्वसनीय गौ सेवा प्रकल्प को दान कर गौ-रक्षा कार्य में सहभागी बन अनंत पुण्य का लाभ लें | हिन्दू शास्त्रों में अंश मात्र गौ सेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

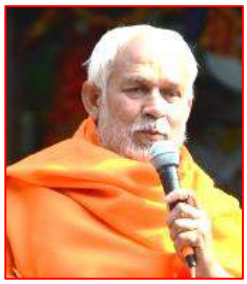

प्रकाशकीय

मानमंदिर सेवा संस्थान द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'मानमंदिर बरसाना' में विशेषतः ब्रज के विरक्त संत पद्मश्री श्रीरमेशबाबामहाराज की वाणी का ही प्रकाशन विविध लेखकों के माध्यम से होता है क्योंकि जैसी पूज्य महाराजश्री की धामोपासना या इष्टोपासना है, वैसी ही उनके आश्रितजनों की है, अतः विचाराभिव्यक्ति में विषमता देखने को नहीं मिलती है | श्रीबाबामहाराज ने अपने ७० वर्ष के अखण्ड ब्रजवास से सभी को यह शिक्षा दी है कि यह धाम साक्षात् श्रीराधामाधव का ही स्वरूप है, इसलिए हम धाम की ही उपासना करते हैं, धामवासी भी आराध्य हैं, वास्तव में उनके जीवन में देखा गया कि कण-कण में उन्होंने अपने आराध्य को देखा | यही भावना हमारे पाठकों के हृदय का भूषण बन सके, इस कामना से पाठकों को इसका लाभ मिल सके; ऐसी मेरी सद्भावना है |

ब्रजभूमि के तरु-लताओं अथवा नदी-पर्वत या गौमाता सबको हम आराध्य समझकर सेवा कर सकें तो हमारा जन्म सफल हो जाएगा | यही कारण है कि संस्थान द्वारा सतत प्रयत्न किए जाते रहे कि ब्रज का बिगड़ता हुआ स्वरूप पुनः पुरातन स्वरूप में स्थित रह सके | इसके लिए यहाँ के दिव्य पर्वतों के संरक्षण की लम्बी लड़ाई लड़ी गई | गाँव-गाँव में प्रभात-फेरी के कार्यक्रम चलाए गए | ५५ हजार से अधिक गौवंश का पालन यहाँ हो रहा है; इसके पीछे एक ही भावना है, हम संभवतया इनके सहारे ही अपने इष्ट का सानिध्य प्राप्त कर सकें |

पूज्य बाबा महाराज ने अपने पूरे जीवनकाल में द्रव्य (पैसे, धन इत्यादि) का स्पर्श तक नहीं किया, उनके संग से आज सैकड़ों साधक-साधिकाएँ मानमन्दिर गह्वरवन में अपेक्षाशून्य जीवन जी रहे हैं, जिन्हें न धन की अपेक्षा है और न भोजन, वस्त्रादि की | यदि आशा है तो केवल अपने आराध्य के मिलन की... बस, यही है सच्चा रास्ता, जिस पर चलकर कोई भी प्राणी सदा-सदा के लिए शोक रहित हो सकता है |

हमारी मासिक पत्रिका अवश्य ही पाठकों को ऐसी प्रेरणा दे रही होगी जो सदा-सदा के लिए जीव को निर्भय व सुखी जीवन जीते हुए प्रभु-प्रेम में अनुरक्त कर सके; ऐसी हमारी सद्भावना है |

प्रबन्धक

राधाकान्त शास्त्री

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

'गौ-धन' से ही होगा समृद्धशाली भारत

"गावो विश्वस्य मातरः" वेदों में 'गाय' को सारे संसार की माता कहा गया; ऐसा क्यों कहा गया? क्योंकि हर व्यक्ति की माँ अलग-अलग होती है, सभी की जन्मदात्री सभी योनियों में अलग-अलग होती है और वह अपने दूध से अपने शिशु का पोषण करती है। जन्मदात्री को जननी कहा गया, वह जननी जन्मदात्री होते हुए भी केवल थोड़े दिन ही अपने दूध से शिशु का पोषण करती है, कुछ दिन बाद उसका दूध सूख जाता है और प्राणीमात्र के पोषण के लिए गौमाता का आश्रय करना पड़ता है, जिसका दूध कभी नहीं सूखता है। मनुष्य-जीवन की अंतिम श्वास तक गौमाता के दूध से पोषण होता है। जन्म देने वाली माँ सदा पोषण नहीं कर सकती है, केवल अपने से उत्पन्न शिशु का पालन थोड़े दिन कर सकती है किन्तु गौमाता संसार के सभी प्राणियों का पोषण करती है। अपनी माता बच्चे से सेवा का भी स्वार्थ रखती है जबकि गौमाता निःस्वार्थ भाव से दूध-दान करती है। ऐसी संसार की जननी 'गौमाता' को मारना अपनी सैकड़ों जननियों से ज्यादा घृणित है, मातृभक्ति की दृष्टि से ही नहीं कृतज्ञता की दृष्टि से भी गौहत्या करना पाप है। अपनी माँ (जन्मदात्री) का मल-मूत्र कभी पूज्य नहीं हो सकता और वह मल रोग-कारक और विषाक्त होता है, उसमें घातक रोगाणुओं की भरमार रहती है किन्तु गौमाता का गोबर मल नहीं वरन् श्रेष्ठ है, निर्दूषज है, रोगनाशक है; किसी को खुजली हुई हो तो गोबर में गोमूत्र मिलाकर लेप करके धूप में बैठ जाओ, सभी खुजली रोग के बैक्टीरिया नष्ट हो जायेंगे | अनुपान के साथ सेवन किया जाए तो विश्व के सभी रोगों पर गोबर-गौमूत्र से उपचार हो सकता है। गोबर से बनी खाद से पृथ्वी की उर्वरा-शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि प्राचीन भारत को 'सोने की चिड़िया' इसीलिए कहा जाता था। 'भारत' सोने की चिड़िया था एवं पुनः पूर्ववत् हो सकता है क्योंकि भारत जैसी सोना उगलने वाली अवनि अन्यत्र नहीं हैं। सन् १९०५ में गौरक्षा का प्रश्न उठा तो यही कहा गया कि अंग्रेज मांसभक्षी हैं, इन्हें जल्द से जल्द देश से निष्कासित किया जाए। उस समय गाँधी जी ने यहाँ तक कहा – "हम स्वतंत्रता के लिए कुछ समय प्रतीक्षा भी कर सकते हैं किन्तु गौ-हत्या होना हमें एक दिन भी सहन नहीं होगा।" आज भारत स्वतन्त्र हो गया किन्तु गौवध बन्द न हुआ। जब भारतीय ही गौ-वध करेंगे तो इस पर रोकथाम लगाने के लिए इटैलियन या अमरीकी नहीं आयेंगे। भारतवर्ष में आज भी इतनी शक्ति है कि अकेला भारतवर्ष समग्र विश्व को शुद्ध अन्न दे सकता है।

विश्व की जनसंख्या लगभग ६०० करोड़ है। एक वर्ष के लिए सारे विश्व को अनाज ६०० करोड़ कुन्तल चाहिए। भारत में १ हेक्टेयर भूमि में ६० कुन्तल अनाज पैदा होता है। भारत की १९ करोड़ हेक्टेयर भूमि में ११४० करोड़ कुन्तल अनाज पैदा हो सकता है। सारे विश्व को ६०० करोड़ कुन्तल अनाज खिला देने के बाद भी भारत के पास ५४० करोड़ कुन्तल शेष बच जाता है ...।

'अंग्रेज' जिन्होंने भारत पर साम्राज्य किया था उनकी आश्चर्यजनक दो बातें ये हैं - भारतीय गुरुकुल व्यवस्था तथा भारतीय कृषि व्यवस्था।

ब्रिटिश राज्यपाल 'रॉबर्ट क्लाइव' ने भारत की कृषि व्यवस्था पर विस्तृत खोज करके निम्नलिखित परिणाम दिए – १. भारत की कृषि में 'गाय' की प्रथम प्रधानता है और गाय की मदद के बिना भारतीय कृषि का सम्पादन नहीं होता है।

२. बंगाल में गाय की संख्या इंसान की संख्या से अधिक है और इसी तरह की स्थिति भारत के अन्य भागों में थी।

३. भारत देश में अस्थिरता लाने के विचार से कसाई खाने का आरम्भ करने की बहुत बड़ी साजिश की गयी थी।

४. सन् १७४० में तमिलनाडु के आकोट जिले में ५४ कुंतल चावल की उपज एक एकड़ भूमि में हुई जहाँ पर साधारण खाद और रसायन जैसे गाय का मूत्र और गोबर का उपयोग ही किया था। ५. सन् १९९० तक परिणाम में ३५० कसाई खाने दिन रात इस कार्य में थे, भारत में

गाय लगभग नष्ट हो गयी थी और भारत को इंग्लैंड के दरवाजे खटखटाने पड़े।

६. आजादी मिलने के बाद हरित क्रांति (खाने के लिए आत्मनिर्भरता) के नाम पर भारत में रासायनिक खाद का अत्यधिक उपयोग हुआ।

७.अंग्रेजों के भारत छोड़ने से पहले एक दैनिक समाचार पत्र के संपादक ने महात्मा गाँधी का इन्टरव्यू लिया। एक प्रश्न के उत्तर में महात्मा गाँधी ने कहा था कि जिस दिन भारत को स्वतंत्रता प्राप्त होगी, उसी दिन से सभी कसाई खाने बन्द करवा दिए जाएँगे।

आज भारतवर्ष में गौवंश के संरक्षण व संवर्द्धन की बहुत आवश्यकता है, अतः भारतियों को जाग्रत करने के लिए ये सांकेतिक चेतावनी है। यहाँ किसी की आलोचना का दृष्टिकोण नहीं है। भारतवर्ष में गौ भक्त व भगवद् भक्त हैं ही नहीं, ऐसा नहीं है। भारतीय सनातन संस्कृति में महापुरुष सदा रहे हैं, तभी धर्म की ध्वजा आज तक फहरा रही है। आज समग्र राष्ट्र को गौ भक्ति व भगवद् भक्ति में संलग्न न देखकर हृदय दुःख से द्रवित होता है। पुनः, इस लेख में गौभक्ति, समाज–संसार के कल्याण की भावना रखी गयी है; विवेकियों द्वारा ही यह सम्मानित होगा|

भारतवर्ष की परमानुपम 'श्रीमाताजी गौशाला'

सच्चा 'गौ-सेवक' गोविन्द का सर्वाधिक प्रिय बन जाता है। लगभग ६० हजार गायों का मातृवत् पोषण कर रहे पूज्य गुरुदेव श्री बाबा महाराज का कथन है कि वस्तुतः गाय का पोषण हम नहीं कर रहे वरन् हम स्वयं गाय द्वारा पोषित हो रहे हैं। गौमाता के उपकारों को देखा जाय तो सच में वे अनन्त हैं। गौमाता व गौमूत्र का महत्त्व जान लिया जाय तो केवल गाय ही नहीं बल्कि बछड़े-बैल जो उपेक्षित हैं, सम्पूर्ण गौवंश इस उपेक्षा से बच जाय। गौवंश का आधा भाग जिसका उपयोग कुछ नहीं है, उसे लोग कटने भेज देते हैं, बछड़े के जन्म से हिन्दू दुःखी हो जाता है। बैल से चलित जनरेटर से विद्युत् शक्ति का घर-घर में उपयोग होगा। उपेक्षा से बचेगा गौवंश। इस उपयोग से विद्युत् शक्ति तो बचेगी ही, देश की आर्थिक व्यवस्था में भी डीजल का भार कम हो जाएगा। आज 'श्रीमानमंदिर' की माताजी गौशाला में लूली-लंगड़ी, असहाय गौवंश का न केवल पोषण प्रत्युत अखण्ड हरि नाम संकीर्तन द्वारा पूजन-आराधन भी हो रहा है। सच्चे 'गौ-सेवकजन' श्रीगोविन्द के सर्वाधिक प्रिय होते हैं। सौभाग्य से श्रीमाताजी गौशाला उसी स्थान पर है जहाँ श्रीवृषभानुजी की गायें बँधती थीं।

मथुरा जिले के सबसे बड़े बायोगैस प्लांट के लिए माताजी गौशाला व अदाणी ग्रुप के बीच एग्रीमेंट हुआ

Adani total gas limited ने 150 टन गोबर से Compressed BIO Gas प्लांट लगाने के लिए श्री माताजी गौशाला बरसाना मथुरा से आज नवरात्रि के शुभ अवसर पर अहमदाबाद स्थिति अपने adani house में एग्रीमेंट, sign किया | इस अवसर पर श्री प्रणव अडानी डायरेक्टर, adani total gas limited , श्री सुरेश मगलानी सीईओ ADANI TOTAL GAS LIMITED व श्री माताजी गौशाला से श्री चंद्रमोहन तालुज जी भी संमिलित हुए|

बरसाना में अदाणी ग्रुप लगाएगा कंप्रेस्ड बायो गैस प्लांट

ब्रज की सबसे बड़ी श्रीमाता जी गोशाला में लगेगा प्लांट, तैयार होगी 23 मीट्रिक टन गैस

विनीत मिश्र ● मथुरा

केंद्र सरकार की बायो ईंधन को बढ़ावा देने की मंशा के तहत अदाणी ग्रुप बरसाना की सबसे बड़ी श्रीमाता जी गोशाला में कंप्रेस्ड बायो गैस (सीबीजी) प्लांट लगाएगा। इसके लिए अदाणी टोटल गैस लिमिटेड व गोशाला प्रबंधन के बीच करार भी हो चुका है। करीब 13 एकड़ में लगने वाले इस प्लांट से प्रतिदिन 23 मीट्रिक टन गैस तैयार होगी। नवंबर में प्लांट का शिलान्यास होगा। एक साल में इसके बनकर तैयार होने की संभावना है।

बरसाना की श्रीमाता जी गोशाला में वर्तमान में 50 हजार से अधिक गोवंशी हैं। करीब 150 मीट्रिक टन गोबर प्रतिदिन निकलता है। गोशाला के सचिव सुनील सिंह ने बताया कि अदाणी ग्रुप प्रबंधन ने प्लांट लगाने के लिए सितंबर में संपर्क किया। आठ अक्टूबर को अहमदाबाद में अदाणी टोटल गैस लिमिटेड के डायरेक्टर प्रणव अदाणी, सीईओ सुरेश मगलानी व श्रीमाता जी गोशाला के चंद्रमोहन तालुज, कुशाग्र गुप्ता, हिमांशु सिंगला और शाश्वत असवा के बीच करार हुआ। गोशाला प्रबंधन अपनी 13 एकड़ जमीन अदाणी ग्रुप को देगा। रोज 23 मीट्रिक टन गैस तैयार करने के लिए 150 मीट्रिक टन गोबर और 200 मीट्रिक टन नैपियर गैस का इस्तेमाल किया जाएगा। नैपियर घास बाहर से मंगाई जाएगी। यहां तैयार बायो गैस को सिलेंडर में भरकर बाहर भेजा जाएगा। अदाणी ग्रुप गोशाला में भी आर्थिक सहयोग करेगा।

जिले में ये सबसे बड़ा कंप्रेस्ड बायो गैस प्लांट होगा। सुनील सिंह ने बताया कि जल्द ही नवंबर में शिलान्यास की तारीख भी तय हो जाएगी।

बरसाना स्थित श्रीमाता जी गोशाला में मौजूद गोवंश ● जागरण आर्काइव

81 पंजीकृत गोशाला हैं मथुरा में, ज्यादातर गोशाला में गोबर से खाद बन रही है

80 हजार से अधिक गोवंश है इन गोशालाओं में, गोबर की बिक्री शुरू होने से होगा लाभ

83 रुपये प्रति कुंतल गोबर खरीदा जाएगा, फिलहाल कीमत 25 रुपये कुंतल है

ये है सरकार की मंशा

सीबीजी प्लांट स्थापित करने के पीछे सरकार की मंशा है कि इससे किसानों की आय दोगुना करने में मदद मिलेगी। युवाओं के लिए रोजगार के अवसर बढ़ेंगे, पर्यावरण संरक्षण भी हो सकेगा।

दो ट्रिलियन निवेश की संभावना

देश में पांच हजार कंप्रेस्ड बायो-गैस प्लांट स्थापित करने के लिए देश में दो ट्रिलियन रुपये के निवेश की संभावना है। नवंबर, 2020 में केंद्र सरकार ने 900 प्लांट स्थापित करने के लिए जेबीएम समूह, अदाणी गैस, टोरेंट गैस और पेट्रोनेट एलएनजी ऊर्जा कंपनियों के साथ समझौता किया है।

बाद में बढ़ेगी प्लांट की क्षमता

गोशाला के सचिव सुनील सिंह के मुताबिक भविष्य में प्लांट की क्षमता बढ़ेगी। तब ब्रज की अन्य गोशाला से भी गोबर खरीदा जाएगा। इससे गोशाला और गोवंशीय की स्थिति में भी सुधार होगा।

क्या है कंप्रेस्ड बायो गैस

पंडित दीनदयाल उपाध्याय पशु चिकित्सा विज्ञान विश्वविद्यालय एवं गो अनुसंधान संस्थान की जैव एवं प्रौद्योगिकी प्रयोगशाला के प्रभारी डा. बृजेश यादव के मुताबिक कंप्रेस्ड बायो गैस, बायो गैस का(गोबर गैस) तरल रूप ही है। यह प्रदूषण रहित ज्वलनशील गैसीय ईंधन है। इसमें मीथेन (55-66 प्रतिशत), कार्बन डाई आक्साइड (35-40 प्रतिशत) और वाष्प पाई जाती है।

'अध्यात्म' का परम प्रेरक 'गौवंश'

जहाँ पर गौवंश का निवास होता है, वहाँ श्रीगोविन्द भगवान् का परम प्रकाश प्रकाशित रहता है |

(शुक्ल यजुर्वेद ६/३)

गौमाता के घर में रहने से हम धनादि से परिपूर्ण होकर समस्त सेवा-कार्यों में सहज समर्थ हो जाते हैं |

(शुक्ल यजुर्वेद ७/१०)

गौओं का नाम-संकीर्तन किये बिना न सोयें, उनका स्मरण करते हुए ही उठें, सबेरे-शाम उन्हें प्रणाम करें; ऐसा करने से बल, पुष्टि व भक्ति की प्राप्ति होती है |

(गवोपनिषद्, सौदास उवाच)

गौमाता को अपने प्राणों के समान देखना चाहिए |

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८/११३)

जो मनुष्य प्रतिदिन स्नान करके 'गाय' का स्पर्श करता है, वह सब प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है | जो लोग गायों के खुरों से उड़ी हुई धूलि को अपने सिर पर धारण करते हैं, वे मानो तीर्थों के जल में स्नान कर लेते हैं व सभी पापों से छुटकारा पा जाते हैं |

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ५७/१६४, १६५)

'गाय के गोबर' में लक्ष्मी का निवास रहता है, उसके द्वारा भूमि को लीपने से लक्ष्मी वहाँ स्वयं आ जाती है |

(स्कन्दपुराण अवन्ती. रे. ८३/१०८)

जिस जलराशि में प्यासी गायें जल पीकर अपनी तृषा शान्त करती हैं और जिस मार्ग से वे जलराशि को लाँघती हुई नदी आदि को पार करती हैं, वहाँ सरस्वती नदी विद्यमान रहती है | गौ रूपी तीर्थ में गंगा तथा सभी तीर्थ निवास करते हैं | गायों के रजकण में निरन्तर बढ़ने वाली धर्मराशि एवं पुष्टि का निवास रहता है, उनके गोबर में भगवती लक्ष्मी निरन्तर निवास करती हैं; उन्हें प्रणाम करने में चतुष्पाद धर्म सम्पन्न हो जाता है, उन्हें नित्य नमन करना चाहिए |

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण, द्वितीयखण्ड ४२/५७,५८)

गौमूत्र में भगवती गंगा, गाय के दधि-दुग्ध-घृत में सोम तथा गोरोचन में भगवती सरस्वती सदा प्रतिष्ठित रहती हैं | गायों के रोएँ अत्यन्त पवित्रताप्रद और पुण्यदायक हैं |

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण, तृतीय खण्ड, अध्याय - २९१)

'गायों के श्वास-प्रश्वास' से घर में महान शान्ति होती है, उनके स्पर्श मात्र से सारे पाप क्षीण हो जाते हैं |
गायों का गोबर और मूत्र सम्पूर्ण अलक्ष्मी (निर्धनता) का नाश करता है | 'गौमूत्र, गौमय, गौदुग्ध-घृत, गोरोचना' ये सब प्रकार से कल्याण-मंगल का विस्तार करने वाले हैं |

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण, पुष्कर उवाच)

गायों में समस्त देवगण निवास करते हैं |

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, श्रीकृष्णजन्मखण्ड २१/९१)

गायें सब प्राणियों की माता हैं |

(महाभारत, अनुशासन पर्व ६९/७)

गायों का समुदाय जहाँ बैठकर निर्भयतापूर्वक साँस लेता है, वह उस स्थान की शोभा बढ़ा देता है और वहाँ के सम्पूर्ण पापों को खींच लेता है | (महाभारत, अनुशासनपर्व ५२/३२)

गौभक्त के लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है |

(महाभारत, अनुशासनपर्व ८३/५२)

गायों के मध्य में साक्षात् श्रीभगवान् निवास करते हैं |

(महाभारत, अनुशासनपर्व ७७/२९)

जिस घर में गाय नहीं है, वह घर श्मशान (मुर्दे-घर) के समान है |

(अत्रिसंहिता ३१०)

२८ करोड़ देवता गायों के रोम-कूपों में स्थित हैं | गौमूत्र में भगवती गंगा के पवित्र जल का निवास है और गोमय में भगवती यमुना व सभी देवता प्रतिष्ठित हैं |

(बृहत्पराशर स्मृति ५/३८, ३९)

'गोमय' पर थूकें नहीं, न ही उस पर मल-मूत्र छोड़ें |

(गवोपनिषद्)

सभी गाँवों में गोचर भूमि रहनी चाहिए, उस भूमि पर पीपल व फलदार वृक्ष होने चाहिए, उस भूमि को कभी भूलकर भी नहीं जोतना चाहिए और न ही खेती-खलिहान के कार्य में लेना चाहिए | (भविष्यपुराण, मध्यमपर्व)

अपने माता-पिता की भाँति गायों का श्रद्धापूर्वक पालन करना चाहिए, गौमूत्र तथा गोबर से कभी घृणा न करें | हृदय से संतुष्ट होकर गायों की परिचर्या करनी चाहिए अर्थात् मन लगाकर गौसेवा करें | (ब्रह्मपुराण)

जो मनुष्य जौ आदि के द्वारा गायों की प्रतिदिन पूजा करता है, उसके पितृगण व देवगण सदा तृप्त रहते हैं |

(पद्मपुराण, पातालखण्ड, अध्याय – १८)

गायों और बैलों की पूजा करने से सम्पूर्ण पितरों और देवताओं की पूजा हो जाती है |

(महाभारत, आश्वमेधिक पर्व, वैष्णव धर्म.)

जो गायों को पैर से ठुकराता है ..., उसको मैं (भगवान्) जड़-मूल से काट गिराता हूँ | (अथर्ववेद १३/१/५६)

गायों के भोजन कर लेने के बाद भोजन करें और उनके जल पी लेने पर जल पियें |

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण, तृतीय खण्ड २९१)

जब गायें पानी पी रहीं हों, तब विघ्न न डालें; उनके चलने के मार्गों में तथा चारागाहों में जल की व्यवस्था करें | (विष्णुधर्मोत्तरपुराण, द्वितीय खण्ड, अध्याय - ४२)

जो मनुष्य गायों को चरने से रोकता है, उनके पितृगण पतनोन्मुख हो जाते हैं | जो लोग गायों को लाठी से मारते हैं, उनको बिना हाथ के होकर यमपुरी में जाना पड़ता है |

(पद्मपुराण, पातालखण्ड, अध्याय – १८)

गायों के बीच में जूते पहनकर अथवा किसी वाहन में सवार होकर न जायें | गौ-वत्सों को कभी लाँघकर न जायें | स्वप्न में भी गायों को ताड़ने या उनके प्रति क्रोध दिखाने का भाव मन में न आने दें | (ब्रह्मपुराण)

यदि आप दूसरों की गायों को स्वयं भोजन करने से पूर्व एक वर्ष तक प्रतिदिन घास खिलाएँ तो आपकी समस्त इच्छाएँ पूर्ण हो जाएँगीं |

जब गायें स्वच्छन्दतापूर्वक विचरण कर रही हों अथवा उपद्रवशून्य स्थान पर बैठी हों, तब उन्हें उद्वेग में न डालें | गायों की प्रदक्षिणा करें, उनके बीच से होकर न निकलें, उन्हें लात न मारें, सदा उनकी बायीं ओर चलें |

(महाभारत, अनुशासनपर्व, अध्याय – ६९)

जो प्यासी गायों को पानी पीने से रोकता है, वह ब्रह्मघातक है | (महाभारत, आश्व. वैष्णव.)

गायों के साथ कभी द्रोह न करें, सदा उन्हें सुख पहुँचायें व उनका यथोचित सत्कार करें, नमस्कार आदि के द्वारा उनका पूजन करते रहें |

(महाभारत, अनुशासन पर्व, अध्याय ८१/३४)

जब 'गाय' बछड़े को दूध पिला रही हो तो उसे न रोकें |

(यावाल्क्य स्मृति १/४०)

गौ, ब्राह्मण, राजा और दृष्टिहीन व्यक्तियों को निकल जाने के लिए रास्ता छोड़ दें |

(बौधायन स्मृति, स्नातक व्रतानि ३०)

दुष्ट व्यक्तियों का एक लक्षण यह है कि वे अकारण गायों को सताते हैं | (जरयुश्तीय गाथाएँ, यश्न ३२/१२)

जहाँ पर गायें रहती हैं, उस स्थान को तीर्थभूमि कहा गया है; ऐसी भूमि में जिस मनुष्य की मृत्यु होती है, वह निश्चित ही तत्काल मुक्त हो जाता है |

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, श्रीकृष्णजन्मखण्ड २१/९३)

'गौशाला' समस्त देवों का निवासस्थान है |

(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८/११२)

प्रतिदिन गायों को गौ-ग्रास दें, जो मनुष्य ऐसा करता है, उसने मानो अग्निहोत्र कर लिया, पितरों को तृप्त कर दिया और देव-पूजा सम्पन्न कर ली |

(स्कन्दपुराण, आ. रेवा. १३/६८)

यदि गायें भूखी-प्यासी रहती हैं तो वे उत्पीड़क के सम्पूर्ण वंश को नष्ट कर सकती हैं | (महाभारत, अनुशासन पर्व ६९/१०)

'गौवंश' का वध कभी भी न करो | (ऋग्वेद ८/१०/१५)

यदि तुम हमारी गौ का वध करते हो तो हम सीसे की गोलियों से तुम्हें बींध देंगे | (ऋग्वेद १/१६/४)

जो मनुष्य माँस बेचने के लिए 'गाय' का वध करते हैं या गौ-माँस खाते हैं अथवा स्वार्थवश कसाई को गाय का वध करने की सलाह देते हैं, वे लोग 'गौ' के शरीर में जितने रोएँ होते हैं, उतने वर्षों तक घोर नरक में पड़े रहते हैं |

(महाभारत, अनुशासन पर्व ७४/३,४)

जो मनुष्य 'सिंह, बाघ या किसी अन्य भय से डरी हुई, कीचड़ में धँसी हुई या जल में डूबती हुई' गाय को बचाता है, वह एक कल्प तक स्वर्ग-सुख का भोग करता है | (हेमाद्रि)

जो मनुष्य 'गौ-माँस' खाते हैं, वे अपनी माता का माँस खाते हैं | (बौद्ध साहित्य, लोकनीति ७)

गौवंश को प्राणों के सदृश देखना चाहिए | (पद्मपुराण)

गौवंश के कारण सृष्टि चल रही है | (गवोपनिषद्)

भारत की आत्मा 'ब्रजभूमि'

भारत की महिमा वास्तव में इसीलिए है क्योंकि भारतवर्ष धर्म-प्राण देश है | सम्पूर्ण विश्व जब पथ-भ्रमित होता है अथवा एक ऐसे स्थान पर खड़ा होता है, जहाँ उसे कोई मार्ग नहीं सूझता है; ऐसे काल में भी सदा से दिशा-निर्देशन का कार्य 'भारत माता' ने किया है, इसलिए इसे जगद्गुरु के रूप में देखा जाता है; इस भारत को भी जिस भू-भाग ने ऊर्जावान बनाया, भारत की महिमा जिस भक्ति के कारण है, उस भक्ति को नव तारुण्य प्रदान किया, वह भूभाग था 'ब्रजप्रदेश' | ब्रज से भारत की महिमा और भारत से सम्पूर्ण विश्व की महिमा है; इसलिए सम्पूर्ण विश्व की महिमा का जो स्रोत है, वह 'ब्रज-वसुन्धरा' ही है |

"व्रजनं व्याप्तिरित्युक्त्या व्यापनाद् व्रज उच्यते ॥"

(भा.माहा.स्क.पु. १/१९)

'व्रज' अर्थात् व्याप्ति। अत्यधिक व्यापक होने से ही इस भूमि को 'ब्रज' कहा गया। अस्मदीय आचार्यचरणों ने ब्रज के गौरवग्रन्थरत्नों का निर्माण करके व्यापक ब्रज के विशद वैभव का बहुविधि वर्णन किया।

'वैभव' से तात्पर्य – ब्रज का ऐश्वर्य, समृद्धि, यश, महत्त्व, प्रतिष्ठा। 'विभु' का ही भाव 'वैभव' है अतः 'वैभव' माने 'व्यापकत्व'। वस्तुतः ब्रजभूमि की प्राचीनता व महत्ता, इसकी नित्यता से ही अनुमेय है।

प्रलय के पूर्व भी ब्रज-वसुधा की विद्यमत्ता थी व प्रलयान्त में भी; जैसा कि गर्गसंहिता में 'वाराह प्रभु व पृथ्वी देवी के सम्वाद' से स्पष्ट होता है –

पृथ्वी – "मेरे बिना ये तरु किस आधार पर खड़े हैं?"

वाराह – "देवी ! यह तो नित्यभूमि है। प्रलय-जल-प्लावन से संख्यातीत भूखण्ड उच्छिन्न हो जाते हैं किन्तु **'प्रलयेऽपि न संहृता'** प्रलय में भी ब्रजभूमि का नाश नहीं होता।" 'ब्रज' ही नहीं 'ब्रजयात्रा की परम्परा' भी सनातनी है। श्रीवाराह भगवान् द्वारा तरणि-तनूजा के तटवर्ती एवं चतुष्कोण में स्थित वनोपवनों का वर्णन ऐसे सुव्यवस्थित यात्रा क्रम से है, जिससे ज्ञात होता है कि सतयुग के आरम्भ में श्रीवाराह देव ने ब्रजयात्रा की, तत्पश्चात् ब्रज के वनोपवनों का क्रमशःगान किया। ब्रज तो नित्य भूमि है। वेदान्तर्गत 'ब्रज-वर्णन' से प्रतीत होता है मानो 'ब्रज' ने वेद को शिरोभूषण धारण कराकर उसे गौरवान्वित किया है। अतः यह कथन उचित ही होगा कि वेदों से ब्रज नहीं प्रत्युत 'ब्रज' से वेदों की भी अति प्राचीनता, महत्ता व नित्यता अवगत होती है।

सभी महापुरुषों ने ब्रजभूमि की भावना व याचना की है –

"यही है यही है भूलि भरमौ न कोऊ"

"अहो विधना तोपैं अँचरा पसारि माँगौं,
जनम-जनम दीजै याही ब्रज बसिबो |"

"जहाँ श्याम की वंशी बाजै, श्रीराधा संग जग नाचै |"

इसी भाव से भावित यहाँ का कण-कण है |

इसी भूमि में चिन्मय धाम की भावना ही 'ब्रजभावना' है।

अहो तेऽमी कुञ्जास्तदनुपमरासस्थलमिदं
गिरिद्रोणी सैव स्फुरति रतिरङ्गे प्रणयिनी।
न वीक्षे श्रीराधां हरि हरि कुतोऽपीति शतधा
विदीर्येत प्राणेश्वरि मम कदा हन्त हृदयम् ॥

(श्रीराधासुधानिधि २११)

अ हा हा ! ये वे ही कुञ्जें हैं जो श्रीयुगल के काल में थीं। यह वही अनुपम रासस्थल है, श्रीप्रियाप्रियतम के रति रंग से प्रेम करने वाली यह वही गोवर्धन की कन्दरा है भाई, यह सम्पूर्ण ब्रज वही है, जहाँ श्रीकृष्ण एक-एक रज कणिका को पवित्र करते हुए चले हैं, दौड़े हैं, बैठे हैं और कभी-कभी तो रमणरेती आदि क्षेत्रों में रज ही बिछाते हैं, रज ही ओढ़ते भी हैं। अब कोई कहे यह तो मिथ्या कल्पना है तो मिथ्या ही सही किन्तु ऐसी मिथ्या भावनाओं से भी लोक-कल्याण हो तो कितना उत्तम है। जहाँ मौग्ध्य व सर्वज्ञत्व एक कालाविच्छिन्न रहता है, वह है अति प्राकृत नरलीला। यह वह भूमि है, जहाँ भगवान् अति प्राकृत लीला करते हैं। नाम, रूप, लीला की सनातनी पीयूषवर्षिणी है यह 'ब्रजभूमि' किन्तु यह लीलारस, लौकिक मर्त्य विषयरस-तृषित जिह्वा से

आस्वाद्य नहीं है; इसके अधिकारी तो श्रीकृष्णरसलम्पट (श्रीब्रजरजनिष्ठ रसिकभक्तजन) ही हैं |

द्वापरान्त में श्रीकृष्ण के धामगमनोपरान्त मथुरामण्डल में बज्रनाभजी (कृष्ण-प्रपौत्र) का राज्याभिषेक हुआ।

बज्रनाभजी के समय में ब्रज केवल सघन वन व जन शून्य स्थान था। महर्षि शाण्डिल्य ने बज्रनाभजी को ब्रज के सार्वभौम सर्वाङ्गीण उद्धार की आज्ञा दी – "बज्र ! भगवल्लीलाओं की चिरस्मृति के लिए लीला-स्थलियों पर पुर, नगर, ग्राम बसाये जाएँ, लीलानुसार उनका नामकरण हो, जिससे भावी-भावुकों के लिए यह भूमि चिरकाल तक दर्शनीय, सेवनीय, उपासनीय बनी रहे।"

प्रत्येक ग्रन्थ में वर्णित वस्तु का प्रतिपाद्य विषय अवश्य होता है। भागवत का दशम स्कन्ध इस बात का उद्घोष है कि भागवत का प्रतिपाद्य केवल श्रीकृष्ण की रसमयी लीलाएँ हैं। 'ब्रज' का कण-कण इन विश्व-कल्याणकारिणी श्रीराधामाधव की लीलाओं के रस से अभिसिंचित है।

भागवतकार ने भगवान् की जन्म से दर्भस्थली (द्वारिका) निर्माण, प्रयाण तक के लीला उपक्रम में ब्रज की समस्त लीलाओं का गान तो किया किन्तु उन पुण्यमय स्थलों का नाम निर्देश नहीं किया चूँकि लीलारसनिमग्न श्रीशुकाचार्य का लक्ष्य अधिकाधिक लीला प्रतिपादन था। "कारणाभावात् कार्याभावः" इस सर्वमान्य न्याय सिद्धान्तानुसार कार्य के पीछे कारण की पृष्ठभूमि निश्चित है अर्थात् बिना कारण के कार्य की कल्पना भी सम्भव नहीं है अतः 'ब्रज' है कारण व 'लीला' है कार्य। ब्रज के बिना लीला सिद्धि सम्भव नहीं। इसका प्रमाण दिया श्रीव्यासजी ने – **धाम्ना स्वेन सदा निरस्त कुहकं सत्यं परं धीमहि।** (श्रीभागवतजी १/१/१) कालाभाव में, मैं केवल कार्य (लीला) को गाऊँगा, कारण सिद्धि (ब्रज) स्वयं जान लेना। 'धाम्ना स्वेन सदा .....' आज प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रहा है श्रीव्यासजी का यह कथन। धाम से ही तो माया का निरसन व भक्ति का प्रकाशन हो रहा है। आज भी करोड़ों लोगों को ब्रज में आने से भक्ति लाभ प्राप्त हो रहा है। कैसे? धाम (कारण) से किन्तु कार्य (ब्रज-वर्णन) को भी छोड़ा नहीं श्री शुकदेवजी ने। लीलागान की शैली से सब कुछ लपेट कर सन्मुख कर दिया – ब्रज के खेट, खर्वट, वाटी, पुर, ग्राम, नगर, वन, उपवन, नदी, पर्वत, ओखर (जल आकर), पोखर (पुष्करिणी), सरोवर, कूप, पशु-पक्षी आदि। अर्थात् इन सब लीला-स्थलियों पर अभूतपूर्व लीलाओं का गान किया। ये लीला ही लीला-स्थलों का परिपुष्ट प्रमाण है अतः महामुनि शाण्डिल्य ने भी बज्रनाभजी को ब्रज की नदी, पर्वत, घाटी, सरोवर, कुण्ड एवं वन-कुञ्जों की सेवा-संरक्षण की आज्ञा दी...। ये वही धराधाम है जहाँ रसिकशेखर श्रीश्यामसुन्दर नित्य क्रीडारत हैं, यहाँ की 'रज' ब्रजभक्तों को परमप्रिय है; यहाँ के काँटे, मिट्टी, यहाँ के कष्ट सभी आनन्दप्रदायी हैं; जो यहाँ के दुःखों से घबड़ाते हैं, वे अभागे लोग 'ब्रजभाव' को जान ही नहीं सकते हैं | ब्रज का अनुरागी भक्त तो कहता है – **"कोटि मुक्ति सुख होत गोखुरू जबै लगत गड़ि पाँयन |"** ब्रजप्रेमी को ब्रज का काँटा लगने पर करोड़ों मुक्ति के समान सुख देता है | ब्रजरसिक रसखानजी तो कहते हैं कि करोड़ों सोने के महल भी करील की कटीली कुँजों पर न्यौछावर हैं |

कोटिक ही कलधौत के धाम,
करील की कुंजन ऊपर वारौं ||

गोपियों जैसा त्याग संसार में कहीं नहीं है। मनुष्य कहीं जाकर धन तो चढ़ा देगा लेकिन धन की आसक्ति को नहीं चढ़ा सकेगा। घर तो छोड़ देगा लेकिन घर में जो आसक्ति है उसे नहीं छोड़ पाता है, बहुत से लोग पैसा नहीं छूते, धन का स्पर्श नहीं करते, धन-सम्पत्ति का तो त्याग कर देते हैं परन्तु उसकी जो आसक्ति है उसे नहीं छोड़ पाते हैं। सब कुछ आसान है परन्तु आसक्ति का त्याग कठिन है।

ब्रज-धरोहर 'वन-सम्पदा'

बाबाश्री के शब्दों में –

ब्रजभक्तिविलास के अनुसार ब्रज में १३७ वन हैं | मैं सोचता था कि मैं कृष्णकालीन व्यक्ति तो हूँ नहीं, जो उन वनों की स्थिति किस गाँव में है, इसका पता लगा सकूँ; श्रीजी से अवश्य मैं प्रार्थना करता हूँ और उनका कीर्तन करता हूँ, वे अवश्य ही कृपा करतीं हैं | एक विचित्र घटना हमारे साथ घटी; एक बार मैं अपने मन्दिर में बैठा था तो उस समय कुछ नेपाल के यात्री आये थे, उनके पास एक पुरानी डायरी थी; मैंने उन लोगों से पूछा कि आप लोग 'ब्रजयात्रा' कैसे कर रहे हो, क्या आप लोगों के पास कोई पुस्तक है ? उन यात्रियों ने बताया कि हमारी कई पीढ़ी के पहले कोई गुरु-परम्परा में एक संतजी 'ब्रज' में रहते थे; उन्होंने हमको ब्रज के वनों के नाम उपलब्ध कराए, मैंने उनकी डायरी देखी तो विचार किया कि ऐसा प्रमाण तो ब्रज में कहीं नहीं है | मैंने अपने मंदिर के व्यवस्थापक संतजनों से कहा कि इस डायरी से देखकर सभी वनों के नाम अलग से अपनी डायरी में लिख लो, मेरे कहने पर इन लोगों ने सारी रात उस डायरी से देखकर सभी वनों के नाम अपनी नोटबुक में लिखे | १३७ वनों में जो प्रमुख ४८ वन हैं, हम लोगों को चाहिए कि वहाँ उनकी स्थिति और उनका परिवेश चिह्न तो अवश्य ही लगायें |

१२ वन हैं – **"काम कोकिला कुमुद खदिर वन छत्र ताल बहुला वन बेल भद्र भांडीर महा लोहजंग वन | ये बारह वन युगल सुकेलि ||"** अब ये बारह वन कहाँ हैं? बहुत से लोग कुछ ही वनों को जानते हैं | कामवन (कामां), कोकिलावन, कुमुदवन, खदिरवन (खायरा), बहुलावन (बाटी) इत्यादि प्रायः लोग जानते हैं | 'बेलवन' वृन्दावन के उस पार है | 'भद्रवन' में तो सब चिह्न गायब हो गये, जो चिन्ह गायब हो गये, उनकी रक्षा कौन करता है ? 'भांडीरवन' में जो श्यामवन है, वह भी कट रहा है | 'लोहजंग वन' में लोगों ने एक काला-सा पत्थर लगा रखा है, कोई उसको शनीचर कहता है, कोई लोहासुर कहता है; जबकि वहाँ पर 'लोहजंघान ऋषि' ने तप किया था, इस बात को कोई वहाँ नहीं जानता है | 'छत्रवन' छाता है, 'तालवन' तारसी है | 'कोकिलावन' में गर्गसंहिता के अनुसार 'गोपीगीत' गाया गया है, वह 'राधाकृष्ण' की मुख्य लीलास्थली है, उसको तो लोग भूल गये और 'शनीचर बाबा' वहाँ ऐसे बैठ गये हैं कि शनिवार के दिन वहाँ का रास्ता जाम हो जाता है, इतनी अधिक भीड़ शनीचर बाबा के दर्शन करने आती है | जब मैं यात्रा लेकर 'कोकिलावन' जाता हूँ और लोगों को शनीचरदेव की उपासना छोड़कर 'श्रीराधाकृष्ण की उपासना' करने को कहता हूँ तो कुछ यात्री मुझसे कहते हैं कि क्या आप शनिदेव से डरते नहीं हो, शनिदेव रुष्ट होकर आपका अनिष्ट कर सकते हैं | मैं कहता हूँ कि शनिदेव मेरा क्या नुकसान कर सकते हैं क्योंकि मैं तो भिक्षा की रोटी माँगकर खाता हूँ, ऐसे में शनीचर मेरा और क्या बिगाड़ सकते हैं | किन्तु दुःख की बात तो यह है कि 'कोकिलावन' में 'राधामाधव की लीलास्थली' लुप्त हो गयी; अनेकों वनों के तो चिह्न ही गायब हो गये, आज यह ब्रज की स्थिति है, इसे हम लोगों को समझना तो चाहिए | वनों के बाद अब उपवनों की स्थिति सुनिए |

"अप्सरा कदम्ब नारद प्रेम परमानन्द मयूर मानेङ्गित | ब्रह्म शेष वन स्वर्ण सुरभि वन विह्वल द्वादश उपवन ||"

गिरिराजजी में अप्सरा कुण्ड के पास जितना स्थल था, वह अप्सरा वन था | नारद वन सब खेत बन गया लेकिन नारद कुण्ड पर उसका कुछ चिह्न लगना चाहिये | गोविन्दस्वामीजी की जो कदम्बखंडी थी, वह कदमवन है, वह भी अब कटती जा रही है | परन्तु हमको इन उपवनों की स्मृति में सब जगह उनके चिह्न रखना चाहिए | प्रेम-सरोवर के पास जो वन था, वह प्रेमवन था, वह भी पूरा कट गया | गाँव के ब्रजवासी मेरे पास आकर कहते हैं – बाबा ! 'वन' कट रहे हैं, कोई कहता है कि प्रेमवन कट रहा है, कोई कहता है अमुक वन कट रहा है | आज प्रायः मनुष्य अर्थ (धन) का दास है, तुच्छ लोभ के कारण ब्रज के वन, पर्वत, कुण्ड आदि की महिमा को भूल गया है |

अस्तु, 'परमानन्दवन' परमदरा में था किन्तु अब वहाँ भी कोई वन नहीं रहा | 'ब्रह्मवन' चौमुँहा में था, वहाँ मानमन्दिर की ओर से एक कुण्ड का जीर्णोद्धार किया गया | ब्रज की दुर्दशा आपको कहाँ तक बतायें, कोसी में 'गोमती गंगा' गटर गंगा बन गयी थी, जिसको द्वारका कहते हैं; मैं 'ब्रजयात्रा' में जहाँ भी जाता हूँ, ब्रज की दुर्दशा को देखकर बहुत कड़े शब्द कहता हूँ | कोसी में भी मैंने वहाँ के लोगों को 'गोमती गंगा' की दुर्दशा के कारण बहुत फटकारा, उसका परिणाम यह हुआ कि वहाँ के लोगों में जागृति आई और एक कमेटी बनाई गयी व अखण्ड हरिनाम-संकीर्तन हुआ, जिससे 'गोमती गंगा' का जीर्णोद्धार हुआ | गोमती के शोधन का जब काम चल रहा था तो कुछ नेताओं ने मुझसे कहा था कि हमारी कलम में जब तक स्याही है तब तक हम आपकी सहायता करते रहेंगे लेकिन उसके विपरीत कार्य उन लोगों ने किया | मुझसे लोगों ने कहा कि आप अब जेल जायेंगे | मैंने कहा कि यह बड़ी प्रसन्नता की बात है, मेरी तो कोई इज्जत ही नहीं है; इज्जत तो उसकी नष्ट होती है जो इज्जत वाला होता है, सब जानते हैं कि मैं रोटी माँगकर खाता हूँ, अगर मेरे हाथों में हथकड़ी और पाँवों में बेड़ी लगती है तो यह मेरे लिए गौरव की बात होगी | एक शायर ने कहा है –

मेरी जंजीरे पास से, ये आवाज आती है |
हटो दीवाना आता है, हटो दीवाना आता है ||

श्रीराधारानी की कृपा से 'गोमती गंगा' का जीर्णोद्धार हो गया, हमारे ठाकुरजी की विजय हुई | नंदगाँव में 'पावन-सरोवर' का जीर्णोद्धार हुआ, उसमें लाखों रुपये खर्च हुए, मेरे पास एक भी पैसा नहीं है; यह तो राधारानी की प्रशंसा है, अपनी प्रशंसा मैं नहीं कर रहा हूँ; ये सब मैं इसलिए बता रहा हूँ कि अच्छे सेवा-कार्य के बारे में केवल सोचने से ही सफलता मिल जाती है | दो महीने के भीतर ही सात कुण्डों का जीर्णोद्धार हो गया, जैसे - हताना में कुण्ड खोदा गया, संकेत में विह्वलकुण्ड का शोधन हुआ, चिकसौली में दोहनीकुण्ड का जीर्णोद्धार हुआ, बरसाने में वृषभानुकुण्ड का जीर्णोद्धार हुआ, चौमुँहा में कुण्ड खोदा गया; इसी प्रकार डभारा में रत्न कुण्ड, सेऊ में नयन-सरोवर आदि कुण्डों का जीर्णोद्धार हुआ | 'संकेत' में विह्वलकुण्ड के चारों ओर का स्थल विह्वलवन है, वहाँ कुण्ड की खुदाई होने से उस कुण्ड की सुरक्षा हो गयी | वन, उपवन के बाद प्रतिवन आते हैं, जैसे – 'अंजनवन' है आँजनोख, 'कामवन' है कमई | दो कामवन हैं - एक तो कामां और दूसरा कमई; कमई तुंगविद्या महासखी का गाँव है | अंजन, इन्द्र, करह, कामवन, शिक्षा, वार्त्ता आदि प्रतिवन हैं – अंजन (आँजनोख), इन्द्र (इंदरौली), करह (करहला), कामवन (कमई), शिक्षा (सांचौली) | प्रतिवनों के बाद अधिवन आते हैं | मैं चाहता हूँ कि इन सबका वहाँ पर एक चिह्न अंकित हो कि यहाँ ये वन व लीला-स्थलियाँ थीं | जो वन कट गये, वे तो कट ही गये किन्तु जो बचे हैं, उनकी तो सुरक्षा होनी चाहिए | ब्रज के सभी वन-पर्वत-कुण्ड पौराणिक हैं; शास्त्रों में इनका इतिहास वर्णित है | इनकी ओर लोग ध्यान नहीं देते | हमारे मानमन्दिर पर न कोई रसोई घर है, न चूल्हा, न बर्तन | एक पैसा मैं अपने पास नहीं रखता; फिर भी राधारानी की कृपा से मानमंदिर द्वारा ब्रज में बहुत से कार्य किये जा रहे हैं ...|

तुम्हारा मन तभी निर्मल होगा, जब तुम्हारी इन्द्रियाँ राग-द्वेष से रहित हो जायेंगी। राग-द्वेष इतना हटाओ कि तुम्हारी इन्द्रियों तक से चला जाये। फिर तुम कुछ भी विषयों को ग्रहण करोगे, तुम्हारा मन निर्मल रहेगा। तुम नग्न स्त्रियों को देखोगे, कुछ नहीं होगा क्योंकि तुम्हारे हृदय में विषयों का राग नहीं है। मन ही सभी इन्द्रियों के प्रवर्तन में कारण होता है। मन से राग ग्रहण कर रहे हो तो अशुभ है। नहीं ग्रहण कर रहे हो तो शुभ ही शुभ है। इसलिए गोपियों ने कहा –

इतररागविस्मारणं नृणां वितर वीर नस्तेऽधरामृतम् ॥

जो सच्चा रसिक भक्त है, उसके अन्दर राग-द्वेष पैदा नहीं होता। जो भागवत, गीता और रामायण नहीं मानता है, उससे तो बात ही नहीं करना चाहिए। फोकट ज्ञानियों के चक्कर में नहीं पड़ना चाहिए। भजन करो, राग-द्वेष छोड़कर चलो, परस्पर प्रेमपर्वक रहो।

नित्य सहज भावमय 'भक्तजन'

मुरलिकाजी के सत्संग से संग्रहीत

भगवान् ने गीता में कहा है –

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत |
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ||
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् |
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ||

(श्रीगीताजी ४/७,८)

भगवान् अपने-आप को दो प्रकार से अवतरित करते हैं – एक तो **'आत्मानं सृजाम्यहम्'** के रूप में उनके जो अपने निज जन हैं, जो उनके आत्मवत् 'आत्मा की तरह' हैं, उनको प्रादुर्भूत करते हैं और दूसरा **'सम्भवामि युगे युगे'** से ये अर्थ स्वीकार किया कि जब धर्म का बहुत अधिक अंश में ह्रास होने लगता है तो वे स्वयं धरती पर अवतरित होते हैं | ब्रह्मसूत्र में श्रीवेदव्यासजीमहाराज ने एक सूत्र लिखा है – **'यावत् अधिकारः'** भक्तों के लिए मुक्तावस्था प्राप्त करना कोई बड़ा कठिन कार्य नहीं है, मुक्त तो वे सहज ही हैं, अपने आप ही हैं किन्तु जब तक भगवान् उनको एक अधिकार या सेवा कार्य देकर रखते हैं तब तक वे अपने उस अधिकार के समय को पूरा करते हैं; उसके बाद उनकी मुक्तावस्था तो नित्य ही है | 'संसार से रागशून्य रहना' यही भक्तों का मोक्ष है | **'निवृत्तिरालब्ध गेहं तपो वनम्'** जिस व्यक्ति का राग चला गया है, उसके लिए घर ही तपोवन है | उसका घर में निवास करना ही निर्जन (एकांत) वन में निवास करने के समान है और जो चारों ओर से राग युक्त जीव है, वह यदि एकान्त में चला भी जायेगा तो उसको एकांतवास से कोई लाभ नहीं मिलेगा | 'भक्त' तो नित्य मुक्त हैं | जिस समय अम्बरीषजी का अपराध दुर्वासाजी ने किया तो वे एक साल तक चक्र की अग्नि से जलते रहे | दुर्वासाजी ने तपस्या की और तपस्या करके मन में ऐसी इच्छा की कि अम्बरीषजी से बदला लिया जाए | तपस्या करके उन्होंने भगवान् से वरदान माँगा कि अम्बरीष की कभी भी मुक्ति न हो | भगवान् ने दुर्वासाजी से कहा – "ऋषे ! आप सावधान होकर वरदान माँगिये | जो मेरा नित्यमुक्त दास है, जो नित्य मुक्त ही है, जिसको मुक्ति के लिए कुछ करना नहीं है, उसके लिए आप कह रहे हैं कि वह कभी मुक्त ही न हो, यह असम्भव जैसा है |" 'कहने' का तात्पर्य यह है कि नित्यमुक्त भक्तों को मुक्त होने के लिए कुछ करना नहीं पड़ता, उनकी नित्य सहज ही मुक्तावस्था है; 'भगवान्' उनको एक अधिकार देकर रखते हैं, जैसे - श्रीवेदव्यासजी का उदाहरण है, उन्होंने कलियुग व द्वापर की संधिकाल में जन्म लिया, द्वापर का अवसान हो रहा था और कलियुग का आरम्भ हो रहा था, उस काल में श्रीवेदव्यासजी ने जन्म लिया, ये पूर्व जन्म में अपान्तरतपा नामक ऋषि थे; भगवान् ने इनको आधिकारिक सेवा दी कि आप जाइये और धर्म का प्रचार कीजिये, आप संसार में जैसा धर्म का प्रचार कर सकते हैं, वैसा कोई द्वितीय नहीं कर सकता | भगवान् की आज्ञा से वेदव्यासजी संसार में आये और उन्होंने ऐसे-ऐसे ग्रन्थ बनाये कि वेदों का विभाजन किया, ब्रह्मसूत्र की रचना की और 'महाभारत' जैसा वाल्मीकि रामायण के समान महाकाव्य, एक इतिहास-ग्रन्थ सनातनधर्म को दिया; पुराणों की रचना की, पुराण-सम्राट 'श्रीमद्भागवत' की रचना की जो सनातन-ग्रन्थ का अंतिम ग्रन्थ है, अंतिम न्यायालय है, साथ ही साथ उपपुराणों की भी रचना की | कहाँ तक कहें, जन्म से मृत्यु तक का सब कुछ उन्होंने दे दिया | इतने ग्रन्थ व्यासजी ने लिखे हैं कि उनके बारे में एक उक्ति प्रसिद्ध है – **"व्यासोच्छिष्टं जगत सर्वम्"** वेदव्यासजी के बाद अब कोई भी लेखक जो कुछ भी लिखेगा तो वह उनकी जूठन ही होगी क्योंकि व्यासजी ने ऐसा कोई विषय नहीं छोड़ा जिसको उन्होंने लिखा न हो; सब लिख डाला पुराणों में, शास्त्रों में, स्मृति ग्रन्थों के अन्दर, वेदों में, महाभारत में और ब्रह्मसूत्र में; इन ग्रन्थों में सृष्टि के प्रत्येक जीव के लिए जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त जो कुछ भी आवश्यक है, वह सब व्यासजी महाराज ने

लिख दिया | यदि अब कोई नया लेखक, नया चिन्तक कुछ भी लिखता है तो वह वेदव्यासजी को उपजीव्य मानकर, उनके किसी ग्रन्थ को आधार मानकर उनका कुछ जूठन ही लिख सकता है, नया कुछ नहीं लिख सकता; ऐसे भगवदावतार थे 'श्रीवेदव्यासजी महाराज', उन्होंने वेदों में भी जन्म से मृत्यु तक के बारे में सब कुछ लिख दिया | सृष्टि क्या है ? जैसे कोई व्यक्ति गाड़ी खरीदने जाता है तो उसके बारे में एक छोटी-सी पुस्तिका मिलती है जिसमें गाड़ी के बारे में पूर्ण विवरण दिया रहता है, पूर्ण निर्देशन दिया रहता है कि गाड़ी का कैसे उपयोग करें, किस तरह गाड़ी को चलायें, क्या-क्या सावधानियाँ बरतें; जैसे वह पुस्तिका theory है और गाड़ी practical है, ऐसे ही जो वेद हैं, वे गाड़ी की निर्देशिका पुस्तक की तरह हैं और जो सृष्टि है, यह practical स्वरूप है | अब इन वेद, शास्त्रों के अनुसार ही आपको चलना है | जब से हम लोगों ने अपने वैदिक धर्म, अपने शास्त्रों को छोड़ा; तब से हम 'मानवता' से भी गिर गये, हम लोगों का इतना पतन हो गया कि हम 'मनुष्य' भी कहला सकें, इतनी भी कोई योग्यता हम लोगों के पास नहीं रह गयी | देखिये - हमारे वेद और सृष्टि आपस में कितने मिलते हैं, जैसे - वेदों में सूर्य का वर्णन है, चंद्रमा का वर्णन है, लोक-लोकान्तरों का वर्णन है | सूर्य है तो उसके रथ का भी वर्णन किया गया है, उनके सात घोड़े साथ में रहते हैं, एक सारथि अरुण उस रथ को चलाता है | आजकल के जो बड़े-बड़े वैज्ञानिक हैं, हो सकता है कि वे अरबों-खरबों वर्षों तक अनुसन्धान करके भी 'वेदों में ब्रह्माण्ड के बारे में जो जानकारियाँ दी गयीं हैं' उनका पता न लगा सकें | वैज्ञानिक कहते हैं कि हमने खोज लिया है कि सूर्य चलता है, चंद्रमा चलता है, पृथ्वी घूमती है; अरे ! तुम लोग तो यह बात आज कह रहे हो किन्तु हमारे ऋषि-मुनियों ने, हमारे वेदों ने इसे theory के रूप में बहुत पहले से ही लिख दिया है | जो वर्तमान सृष्टि है, उसे लगभग दो अरब वर्ष हो गये हैं, वैसे तो सृष्टि अनादि है | गीताजी में भगवान् ने कहा – **"प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि |"** (श्रीगीताजी १३/१९) भगवान् और सृष्टि कब से है, इसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता | जब से भगवान् हैं, तब से सृष्टि है; ये दोनों अनादि हैं और जो वर्तमान सृष्टि है, इसको भी लगभग दो अरब वर्ष हो गये और हमें जो कुछ भी दिखाई दे रहा है, हमारे वेदों में वह सब कुछ लिखा है; यहाँ तक कि जो हमें दिखाई नहीं दे रहा है, वह भी वेदों में लिखा है और जिसे शायद हम कभी भी नहीं देख पायेंगे, वह भी लिखा है; भले ही विज्ञान वहाँ न पहुँच पाए, बड़े-बड़े पढ़े-लिखे लोग भी न पहुँच पायें क्योंकि हम लोगों की जो मानवीय बुद्धि की क्षमता है, वह बहुत सीमित दायरे में है; इसकी एक निश्चित सीमा है, उससे आगे इसकी कोई गति नहीं है किन्तु हमारे 'ऋषि-मुनि' योग के बल पर, अपनी उपासना के बल पर अति सूक्ष्मदर्शिता से सृष्टि का इतना सूक्ष्मतम अंश देख चुके हैं, जिसकी हम लोग कल्पना भी नहीं कर सकते हैं |

जो चारों ओर से रक्षा करता है वह है पति। अब जो स्वयं काल के मुख में पड़ा हुआ है, वह बेचारा दूसरे को क्या बचाएगा? सच्चा पति तो वह है जो 'अकुतोभय' है, जिसको कहीं भय नहीं है, न काल का, न गुणों का, न बीमारियों का, वह पति हो सकता है। संसार का कौन-सा पति है, जो काल से बचायेगा? सब पति भक्षक हैं, भोगी हैं। हर आदमी भय से घिरा हुआ है, पता नहीं कब काल आ जाये? कब बीमारी आ जाये? कब क्या हो जाए? चारों ओर से संसार में भय है, केवल अभयप्रद भगवान् हैं। इसलिए भगवान् ही परमपति हैं, सच्चे रक्षक हैं। भगवान् चाहते हैं कि तुम हमारे पास आ जाओ, क्यों मरते हो संसार में? क्यों फँसते हो? काल के मुँह में क्यों जाते हो? मेरी प्राप्ति करके परमात्म-लाभ प्राप्त कर लो।.....(श्रीमद्भागवतजी ५/१८/२०)

परमकृपामयी 'श्रीसहचरियाँ'

श्रीमुरलिकाजी के सत्संग (४/९/२०२०) से संकलित

'श्रीसहचरीभाव भावित रस' परमाद्भुत, विचित्र व अति रहस्यमय है, बिना रस की अधीश्वरी श्रीराधारानी अथवा सहचरीवृन्द की कृपा के बिना इसे जाना अथवा समझा नहीं जा सकता, इसलिए श्रीहितहरिवंशमहाप्रभु के बारे में श्रीनाभाजी ने भक्तमाल में कहा –

श्रीव्यास सुवन पथ अनुसरै सोई भले पहचानिहै |
श्रीहरिवंश गुँसाई भजन की रीति सकृत कोई जानिहै ||

"श्रीव्यास सुवन पथ अनुसरै" – सहचरियों का जो अनुसरण करेगा, उनके अनुसार जो चलेगा, उनकी अनुकूलता में ही जो अपनी अनुकूलता को मिला देगा, ऐसा व्यक्ति इस रसोपासना के मार्ग को जान सकता है | इस रसोपासना के मार्ग को दुर्गम अवश्य कहा गया है किन्तु अगम्य नहीं कहा है, ऐसा नहीं कि उसे समझा ही नहीं जा सकता परन्तु इतना अवश्य है कि इसे समझना बहुत कठिन है; वह कठिनाई हम लोगों के हृदय का कषाय भी जता सकता है क्योंकि जीव किसी प्रकार के व्यवहार में पड़ जाए, संकीर्णताओं के चक्कर में पड़ जाए या परस्पर राग-द्वेष की कलुषित भावनाओं से ग्रस्त हो जाए तो इन सब कालुष्यों के कारण तत्त्व को, वस्तु को समझने में बहुत कठिनाई हो सकती है; किन्तु यह रसोपासना का मार्ग अगम्य नहीं है, ऐसा नहीं कि इसको समझा ही नहीं जा सकता | श्रीमहावाणीकार श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी ने एक पद में सहचरियों की कृपा को दर्शाया है –

चलहु चलहु चलियें निज देस |
रंग-रँगीले जुग नरेस जहाँ दिब्य कनकमय,
अवनि अखण्डित मनिमंडित तहाँ करें प्रवेस ||
करुणानिधि श्रीनित्यकिसोरी करि अनुकम्प कियौ आदेस |
आई अग्रवर्ति अलबेली धरि बर इच्छा विग्रह वेस ||
ऐसो अवसर बहुरि न ऐहै ओर निबाहू संग सुदेस |
नेम प्रेम तें परे पंथ तहाँ तुरत पहुँचि हैं अलि अकलेस ||

(श्रीमहावाणी, सिद्धान्तसुख -१३)

श्रीठाकुरजी 'श्रीराधारानी' से प्रार्थना करते हैं – 'हे राधे ! आप कृपामयी हैं | संसार के जीव अनेक प्रकार के तापों से संतप्त हैं, इन पर करुणा करिए |' तब श्रीराधारानी अनादिकाल से त्रस्त हम जीवों पर कृपा करने के लिए अपने निज परिकरों को भेजतीं हैं और वही 'सखी-सहचरियों' का परिकर यहाँ प्रकट धाम में रसिकाचार्यों व रसिकजनों के रूप में अवतरित होता है |

"आई अग्रवर्ति अलबेली धरि बर इच्छा विग्रह वेस ||" परम सुन्दर रूप धारण करके, श्रीजी की आज्ञा का अनुमोदन करते हुए वे सब 'सखियाँ' रसिकों के रूप में आतीं हैं | **"और निबाहू संग सुदेस, चलहु चलहु चलिए निज देस |"** वे जीव से कहतीं हैं – अरे जीव ! चलो, यह तुम्हारा देश नहीं है, यह तुम्हारा असली स्थान नहीं है; कहाँ तुम संसार में, पाप में भटक रहे हो ? हम तुम्हें निज देश तक पहुँचा देंगी, तुम्हारे असली ठिकाने (घर) तक तुम्हें पहुँचा देंगी | 'और निबाहु संग मिलि' – हम तुम्हें निभायेंगी, तुम्हारी 'यात्रा' यहाँ प्रकट धाम से लेकर नित्य धाम तक हम पहुँचायेंगी | जब वे 'सखीजन' रसिकजनों के रूप में आती हैं तो जीव पर इतनी कृपा-करुणा करती हैं कि यहाँ से लेकर श्रीजी-ठाकुरजी के निकट तक पहुँचाने के कार्य की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले लेती हैं | वस्तुतः उस युगल तत्त्व तक पहुँचने की यात्रा किसी भी प्रकार का साधन पूर्ण नहीं कर सकता है | कोई कितना भी उत्कट भजन करे, साधन करे लेकिन निज देश तक पहुँचाने का कार्य संसार का कोई भी साधन नहीं कर सकता है; केवल रसिकों की कृपा ही कर सकती है, यदि जीव उनके अनुसार अपने को ढाल ले, उनका अनुसरण करने लग जाए तो सहज में वे युगल तत्त्व से मिला सकते हैं, उन तक पहुँचा सकते हैं |

ये सहचरियाँ कहाँ से आयीं हैं, कहाँ की बात कर रहीं हैं, जहाँ रस के दोनों राजा हैं | 'युग नरेश' – दोनों ही राजा हैं, श्रीराधारानी भी और श्रीश्यामसुन्दर भी, दोनों ही विराजे हुए हैं | किनके राजा हैं ? जैसे प्रजा का स्वामी

राजा होता है, उसी प्रकार यहाँ उपासक रूपी जो प्रजा है तो उस उपासक-जगत के राजा 'राधा-माधव' हैं |

"रंग-रँगीले जुग नरेस जहाँ दिब्य कनकमय,
अवनि अखण्डित मनिमंडित तहाँ करें प्रवेस ||"

कैसा है वह देश ? सुन्दर मणिमय भूमि है, कोमल मणियों की भूमि है, कनकमय (स्वर्णमय) है, अखंडित है, जिसका कभी किसी काल में नाश नहीं होता है, जो सदा से एकरस बना हुआ है; उस नित्य देश में ले जाने की बात रसिकजन कर रहे हैं | **"करुणानिधि श्रीनित्यकिसोरी करि अनुकम्प कियौ आदेस |"** श्रीराधारानी करुणा की भण्डार हैं | 'अनुकम्पा और करुणा' इन दोनों में अंतर है; जीव की दयनीय दशा देखकर श्रीजी का हृदय करुणा से भर गया और करुणा से भरने के बाद कम्पायमान हुआ अर्थात् जीवों की दयनीय दशा देखकर राधारानी का हृदय करुणा के कारण काँप उठा; उस अनुकम्पित चित्त से श्रीजी ने कृपा करी और अपनी सहचरियों को संकेत किया कि तुम लोग पृथ्वी पर जाओ और त्रिताप से संतप्त जीवों पर कृपा करो, उनको हम तक पहुँचाओ | क्योंकि यह बात तो निश्चित है कि श्रीठाकुरजी का आश्रय और उनका सानिध्य पाए बिना जीव संसार में सुखी हो ही नहीं सकता है | जीव सुखी हो जाए, इसका एक ही रास्ता है कि वह श्रीठाकुरजी तक पहुँच जाए और उन तक पहुँचाने के लिए जो यात्रा है, उसे यह सहचरीवृन्द ही सम्पन्न करती हैं | तो ये सब रसिकजन यहाँ स्वयं नहीं आये, श्रीराधारानी की करुणा ही इन्हें यहाँ लाती है, वे करुणा के द्वारा यहाँ आती हैं, अवतार लेती हैं |

"आई अग्रवर्ति अलबेली धरि बर इच्छा विग्रह वेस ||"

अग्रवर्ती माने यूथेश्वरियाँ | वे यूथेश्वरियाँ, जो एक तरह से सखी समूह की मुखिया हैं, वे अग्रवर्ती महासखीजन यहाँ रसिकों के रूप में आतीं हैं | हम लोगों का 'जन्म' काल, कर्म आदि के बन्धन से होता है लेकिन उन महापुरुषों का अवतरण श्रीठाकुरजी की ही भाँति स्वेच्छा से होता है; यह काल, कर्म, गुण, प्रकृति के बन्धन में नहीं है | जब तक हम लोगों का जैसे जन्म होता है, वैसे उनका जन्म बन्धन में नहीं है | जब वे आते हैं, स्वेच्छा से आते हैं, जब तक वे यहाँ चाहें, रहें; स्वेच्छा से वे आते हैं और स्वेच्छा से चले जाते हैं | अपनी इच्छा से वेश धारण करके वे आते हैं |

"ऐसो अवसर बहुरि न ऐहै ओर निबाहू संग सुदेस |"

वे रसिकजन इस संसार में आकर जीवों से कहते हैं – भैया ! यह जीवन, यह समय बार-बार नहीं मिलेगा; इस अवसर को मत चूको, यह मनुष्य शरीर बार-बार नहीं मिलेगा, इसका सदुपयोग करो, इसे सार्थक करो, सुन्दर देश में चलो | हम जैसे लोग अज्ञ हैं | कौन-सा देश है, उसका क्या महत्त्व है, हम लोग इस बात से परिचित नहीं हैं | रसिकजन कहते हैं – तुम चिंता मत करो, हम निभायेंगे, हम तुम्हारा हाथ पकड़कर (भीतर) लेकर जायेंगे | कैसा मार्ग है - **"नेम प्रेम तें परे पंथ तहाँ, तुरत पहुँचि हैं अलि अकलेस ||"** 'नियम व प्रेम' से आगे का यह मार्ग है | 'नियम' से तात्पर्य है साधन-भक्ति और 'प्रेम' से तात्पर्य है सिद्धा-भक्ति | साधन भक्ति तथा सिद्धा भक्ति – दोनों से ही ऊपर है 'रस भक्ति' | 'नियम' से तात्पर्य कहीं-कहीं वैदिक साधना, वैदिक विधा को माना गया है और 'प्रेम' से तात्पर्य भक्ति को माना गया है | लेकिन श्रीजी का मार्ग साधन और सिद्धा – दोनों प्रकार की भक्तियों से ऊपर है | 'रसोपासना' का मार्ग सबसे ऊपर है; बिना किसी क्लेश के तुम वहाँ पहुँच जाओगे | इस मार्ग में क्लेश कौन-सा है ? हमारी जो बाधक वृत्तियाँ हैं, वही इस मार्ग का सबसे बड़ा अवरोध हैं | अनेकों प्रकार के दोष हमारी वृत्तियों में, चित्त में भरे पड़े हैं | अभी तो साधारण-सी लौकिक कामनायें ही नहीं छूट रहीं हैं | लोकैषणा, दारैषणा और वित्तैषणा – ये सब चित्त के क्लेश हैं, ये इस मार्ग के काँटे हैं; जब तक ये हैं, तब तक तुम इस मार्ग पर चल ही नहीं सकते, आगे नहीं बढ़ सकते | हमारी बहुत-सी चित्त की वृत्तियाँ इस मार्ग की बाधक बनतीं हैं, जैसे कामनायें है, राग-द्वेष हैं | प्रायः लोग इन सिद्धांतों को सुनना या सिद्धांतों की चर्चा करने को फालतू बातें समझते हैं परन्तु जब तक इन अनर्थों के बंधन का निवारण नहीं होगा, तब तक हम सरलता से इस मार्ग पर न चल सकते हैं, न आगे बढ़ सकते हैं |

रसिकजन हमारे चित्त को क्लेश रहित बनाने की जिम्मेदारी भी लेते हैं | वे कहते हैं – तुम चिंता मत करो और हमारा अनुसरण करो, हमारे पीछे-पीछे चलो | हमारे अनुकूल बन जाओ, बाकी चित्त की वृत्तियों को, बाधक वृत्तियों को अनुकूल बनाने का काम हमारा है | उसे अक्लेश बनाने का, क्लेश रहित बनाने का काम हमारा है, सब जिम्मेदारी हमारी है | परन्तु स्वयं तुम तो उनका अनुसरण करो, उनके पीछे-पीछे तो चलो |

इस उपासना की मार्ग-विधि बता रहे हैं | अपने आपको सखी रूप में चिंतन करो | पुरुष है, स्त्री है, ये सब चिंतन वहाँ नहीं चलेगा | अपने आपको सखी भाव में रँगना पड़ेगा | सखी भाव में रँगने के लिए जैसे श्रीजी की सेवा में जा रहे हैं सोलह श्रृंगार धारण करके | राधारानी कौन-से सोलह श्रृंगार धारण करतीं हैं, यह उज्जवल नीलमणि ग्रन्थ में लिखा है, वे बारह प्रकार के आभरण धारण करतीं हैं लेकिन स्वरूप-ज्ञान होना चाहिए | एक विषयी व्यक्ति को निरन्तर विषय-चिंतन होता है, लोभी को सदा धन का चिंतन होता है, ऐसे ही हमारी वृत्तियों का चिंतन केवल और केवल राधारानी के सखी भाव में रँग जाए | किसी सखी का आश्रय लेकर, उनकी सेवा का आश्रय लेकर, जिसको गौड़ेश्वर सम्प्रदाय के संतों ने 'अन्तश्चिन्तित वपु' का नाम दिया है, यह अनुकूल वेश है | इसके बाद गुरुजन अपने शिष्य की योग्यता, पात्रता को देखते हुए 'अन्तश्चिन्तित वपु' प्रदान करते हैं कि तुम अमुक यूथेश्वरी के यूथ में मिल जाओ, तुम उनकी सेवा सँभालो, तुम ये सेवा सँभालो |

.....

वैराग्य-वृत्ति से ही वास्तविक भजन

बाबाश्री के सत्संग (९/४/१९९६) से संकलित

श्रीवल्लभाचार्यजी कहते हैं कि ज्ञान व वैराग्य दोनों आवश्यक हैं | यदि आपको डाइबिटीज है तो दवा भी खाओ और साथ-साथ अन्य जो कुछ मीठा खाते हो, उसे छोड़ दो | यदि रोज मीठा खाते हो तो रोग तो तुम्हारा बढ़ेगा, ऐसे में दवा क्या काम करेगी ? भगवान् राम ने नारदजी से कहा कि काम, क्रोध, लोभ आदि संस्कार की माया है किन्तु इनमें भी सबसे अधिक दुःखद साक्षात् माया 'नारी' है; इसीलिए मैंने तुम्हारा विवाह नहीं होने दिया | साक्षात् माया से दूर रहना चाहिए | यही बात वल्लभाचार्यजी कहते हैं, कितनी गहरी बात उन्होंने कही है और निंदक लोग कहते हैं कि वल्लभ सम्प्रदाय में तो ज्ञान-वैराग्य की बातें बतायी ही नहीं जाती हैं | जो पढ़े-लिखे नहीं हैं, वे ही इस तरह की व्यर्थ निंदा किया करते हैं | मनुष्य को मर्यादा से रहना चाहिए; चाहे स्त्री हो, चाहे पुरुष हो; नहीं तो उसका सब साधन नष्ट हो जायेगा | कभी भी साधन सफल नहीं होगा | भगवान् की प्राप्ति सरल नहीं है | **"चलो चलो सब कोई कहै, पहुँचे विरला कोय | एक कंचन एक कामिनी दुर्गम घाटी दोय ||"** स्त्री के लिए पुरुष और पुरुष के लिए स्त्री माया है | कोई स्त्री यदि भजन करने चली है और उसके लिए साक्षात् माया पुरुष का आकर्षण बढ़ रहा है तो उसका साधन कभी सफल नहीं होगा | कोई पुरुष भजन करने चला है किन्तु यदि स्त्री के आकर्षण में पड़ रहा है तो उसका साधन कभी सफल नहीं होगा | भगवान् राम ने बताया कि इसका कारण यह है – **सुनु मुनि कह पुरान श्रुति संता |**
मोह बिपिन कहुँ नारि बसंता ||

(रामचरितमानस अर.का. – ४४)

भगवान राम ने कहा कि ऐसा वेद, पुराण और संत आदि सभी कहते हैं, केवल मैं ही नहीं कह रहा हूँ | यहाँ 'रामचन्द्रजी' छः ऋतुओं की उपमा स्त्रियों से दे रहे हैं | 'ऋतु' कहते हैं जो स्त्रियों को मासिक धर्म होता है, उसे ऋतु-धर्म भी कहते हैं | 'ऋतु' का दूसरा अर्थ है जो काल के हिसाब से ऋतुएँ आती हैं; इसीलिए ऋतु धर्म के कारण ऋतु की उपमा यहाँ स्त्रियों से दी गयी है | राम जी कहते हैं कि जैसे रजस्वला स्त्री से संपर्क करने से ब्रह्महत्या के समान पाप होता है, वैसे ही साधक को भी चाहिए कि

किसी भी स्त्री के साथ उठने-बैठने को रजस्वला-गमन की तरह ब्रह्महत्या के समान पाप समझकर चले, तब उसका साधन सफल होगा | इसीलिए छः ऋतुओं की उपमा रामजी यहाँ स्त्रियों से दे रहे हैं; ये है साक्षात् माया का त्याग-वैराग्य | यही वल्लभाचार्यजी महाराज कह रहे हैं और यहाँ भगवान् राम बता रहे हैं; वे कहते हैं कि पहली बात तो यह है कि स्त्री 'बसन्त ऋतु' है |

"मोह बिपिन कहुँ नारि बसंता" बसन्त ऋतु क्या करती है ? अब देखिये स्त्री बसन्त कैसे है ? मोह रूपी जंगल के भीतर बसन्त ऋतु आती है | बसन्त ऋतु जिस जंगल में आती है, वहाँ नये फूल, नये फल और नये-नये भँवरे आने लग जाते हैं | ऐसे ही जिस पुरुष के पास स्त्री जाती है या जिस स्त्री के पास पुरुष जाता है, उसके मोह रूपी जंगल में फल, फूल और भँवरे बढ़ते हैं | बसन्त ऋतु आने पर जंगल में हिंसक पुरुष और अहिंसक जीव भी बढ़ते हैं | फूल क्या है ? कामना हुई कि हमारा विवाह हो जाये, स्त्री मिल जाये; स्त्री कहती है कि अमुक पुरुष मुझे मिल जाये; ये सब नयी-नयी इच्छा ही फूल है | फल क्या है ? इसका फल यह होता है कि हम 'अहंता-ममता' को चखने लग जाते हैं, मेरा-तेरा की भावना बढ़ती है | यही बात श्रीमद्भागवत में ऋषभदेव जी कहते हैं –

पुंसः स्त्रिया मिथुनीभावमेतं तयोर्मिथो हृदयग्रन्थिमाहुः |
अतो गृहक्षेत्रसुताप्तवित्तैर्जनस्य मोहोऽयमहं ममेति ||

(श्रीमद्भागवतजी ५/५/८)

यह 'मोह विपिन' का अर्थ बताया जा रहा है कि जब स्त्री-पुरुष मिलते हैं तो स्त्री कहती है कि यह मेरा पति है और पुरुष कहता है कि यह मेरी पत्नी है | यह जो मिथुन-भाव पैदा होता है, इससे हृदय में गाँठ बन जाती है और उस गाँठ के बनने से मैं-मेरापन (अहंता-ममता) बढ़ जाता है, यह फल लग गया | अब इसे देख लो, जिस स्त्री से आपका संपर्क हो या जिस पुरुष से स्त्री का संपर्क होता है, वहाँ 'यह मेरा है, यह मेरी है'- ऐसी बुद्धि बढ़ जाती है, तुरंत ही फल लग जाता है, देर नहीं लगती है; यह शास्त्र की गहरी बातें हैं | ऐसा हो ही नहीं सकता कि वहाँ आपके भीतर 'अहंता-ममता' पैदा न हो; यह भगवान् की वाणी है | **"जनस्य मोहोऽयमहं ममेति |"** जहाँ भी आप संपर्क रखोगे, तुरंत ही वहाँ मेरापन पहुँच जायेगा, ममता पहुँच जाएगी वहाँ, ये फल लग जायेंगे; इसको चखो और मरते रहो; उसके दुःख में दुःखी हो, उसके सुख में सुखी हो | इस तरह से जीवन भर मरते रहो | इसीलिए भगवान् राम ने कहा कि 'स्त्री' बसन्त ऋतु है, इसमें फल-फूल क्या हैं ? फूल 'कामनायें' हैं तथा फल 'अहंता-ममता' है | भँवरे क्या हैं, ये हैं रस लूटने वाले | बेटा-बेटी पैदा हो गये, अब इनके लिए कमाते चले जाओ | ये भँवरे पैदा हो गये जो रस लेते हैं | जंगल में हिंसक और अहिंसक पशु होते हैं | अहिंसक पशु हैं – ये हमारी सास हैं, ये ससुर हैं और हिंसक पशु हैं – भीतर काम-क्रोध आदि बढ़ गये | इस तरह ये सब हुआ क्यों ? तो भगवान् राम कहते हैं – "मोह बिपिन कहुँ नारि बसंता |" बसन्त ऋतु रूपी स्त्री आई तो मोह के जंगल में इस तरह की अनेकों चीजें लग गयीं | यदि कोई व्यक्ति भजन करता भी है तो **"जप तप नेम जलाश्रय झारी | होइ ग्रीषम सोषइ सब नारी ||"** जैसे गर्मी की ऋतु जब आती है तो सब पानी सूखने लग जाता है | जलाशयों का पानी तो नहीं सूखता है लेकिन राम जी बोले कि बिल्कुल सूख जाएगा, 'झारी' माने झार के, पोंछ कर के एक बूँद भी पानी नहीं रह जाएगा | 'झारी' माने झार-झार के पोंछ देगा, जितना तुमने जप किया, तप किया, वह 'स्त्री-आसक्ति' के कारण सब नष्ट हो गया | 'भगवान् राम' नारदजी से कहते हैं कि इसीलिए मैंने तुम्हारा विवाह नहीं होने दिया ...|

हम जैसे लोग भक्त कैसे बन सकते हैं? हम लोग तो गधी की लीद पर मर जायेंगे | *कितनी भी सुन्दर स्त्री है, आखिर उसके शरीर से निकलता तो है मल-मूत्र ही और उस मल-मूत्र पर मरने वाले अर्थात् मल-मूत्र की पिण्डी स्त्री से भोग-सुख चाहने वाले क्या भक्त हो सकते हैं?*

प्रेम की पराकाष्ठा 'सर्वात्मसमर्पण'

श्री बाबा के सत्संग (८/८/२००२) से संकलित

युक्त नीति क्या है, वह है प्रेम | जिस प्रेम की नीति के कारण राधारानी ही नहीं, उनकी कृपा से समस्त ब्रजगोपियों ने श्रीकृष्ण को वश में किया |

आधाय मूर्द्धनि.....| (श्रीराधासुधानिधि – ४)

जिन श्रीचरणों में जो नख मणियाँ हैं, उनकी ज्योति रूपा, छटा रूपा गोपीजन हैं -

यत्पादपद्मनखचन्द्रमणिच्छटायाः

विस्फूर्जितं किमपि गोपवधूष्वदर्शि | (श्रीराधासुधानिधि – १०)

गोपियाँ जितनी भी थीं, उनके चरण नखमणि की एक छटायें थीं | एक-एक किरणें ही गोपियाँ थीं और श्रीराधिकारानी तो पूर्णानुराग रससागरसारमूर्ति हैं अर्थात् सम्पूर्ण अनुराग और रस की मूर्ति हैं |

जो प्रेम की मूर्ति हैं, वे क्या हैं ? भक्ति जहाँ समाप्त हो जाती है, वहाँ से प्रेम का प्रारंभ हो जाता है | यद्यपि उसको रसमयी भक्ति कह लो, बात एक ही है किन्तु फिर भी भक्ति समाप्ति का तात्पर्य है कि भक्ति अनेक प्रकार की है जैसे ज्ञान मिश्रा, ऐश्वर्य मिश्रा, योग मिश्रा, आरोप सिद्धा भक्ति, सर्व सिद्धा भक्ति | इसीलिए भक्ति जहाँ समाप्त होती है, वहाँ से प्रेम का प्रारंभ माना गया है अर्थात् जिस प्रेम में न ज्ञान मिश्रण है, न योग मिश्रण है, न कर्म मिश्रण है; उस भक्ति की समाप्ति राग में होती है | 'राग' कह लो, चाहे 'प्रेम' कह लो | राग की समाप्ति कहाँ होती है ? राग की समाप्ति समर्पण में होती है | समर्पण केवल वस्तु, क्रिया का ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण वृत्तियों का समर्पण भी होता है | समर्पण कोई करता भी है तो समर्पक बाकी रह जाता है | इसको ऐसे समझिये जैसे हमने आपको कुछ वस्तु भेंट की और आपने हमारी भेंट को ले लिया परन्तु हम जो भेंट करने वाले थे, वह तो बच ही गये | हमने आपको अपना घर-परिवार सब कुछ दे दिया परन्तु 'हम' तो बाकी रह गये | अतः समर्पण क्रिया में सब कुछ देने के बाद भी जो समर्पण करने वाला होता है, वह बच जाता है | क्योंकि भक्ति अद्वैत में तो है नहीं | अद्वैत में तो सब कुछ ब्रह्म रूप हो जाता है | अतः जब भक्त समर्पण करता है तो कितना भी ऊँचा भक्त हो, 'सर्वस्व' अर्पण करने के बावजूद भी 'वह' शेष रह जाता है | उदाहरण के लिए राजा बलि को देखिये –

बलि का दान बड़ा प्रसिद्ध है | राजा बलि के दान के कारण ही 'बलिदान' शब्द प्रयुक्त हुआ कि हमने बलिदान किया अर्थात् हमने सब कुछ दे दिया | राजा बलि ने दान तो किया किन्तु दान देने वाला राजा बलि बच गया था | इसका प्रमाण यह है कि जब राजा बलि द्वारा दान में दिए गये सब लोकों को भगवान् वामन ने अपने दो पगों में नाप लिया, तब भगवान् ने कहा कि अब मैं अपना तीसरा चरण कहाँ रखूँ ? बलि ने कहा कि आपने मेरा राज्य ले लिया, पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक आदि सब ले लिया किन्तु अभी मैं तो बाकी हूँ | दान देने वाला तो बाकी है | इसलिए आप मेरे मस्तक पर अपना पाँव रख दीजिये | यह एक बड़ा भारी प्रमाण है कि हम जब कोई वस्तु किसी को देते हैं तो सब कुछ देने के बाद भी 'देने वाला' बचा रहता है |

अस्तु, भक्ति की समाप्ति राग में हुई | भागवत में बहुत प्रकार की भक्ति का वर्णन कपिलदेवजी ने किया है, जैसे सात्त्विक भक्ति, राजस भक्ति, तामस भक्ति आदि; अंत में उन्होंने गुणातीत भक्ति के बारे में बताया | इन सबकी समाप्ति राग में जाकर हो जाती है, जिसको 'प्रेम' कहते हैं; राग की समाप्ति 'समर्पण' में होती है लेकिन समर्पण में 'समर्पण करने वाला' बाकी बचता है, जैसा कि अभी बताया कि सर्वस्व दान करने के बाद भी राजा बलि बचे रहे | भगवान् ने उनसे कहा कि तीन पग दान देने का तुम्हारा वचन पूरा नहीं हुआ, इसलिए तुमको नरक की प्राप्ति होगी, तुम्हारा वचन मिथ्या हुआ | राजा बलि बोले कि मिथ्या नहीं हुआ क्योंकि अभी मेरा शरीर बाकी है | आप इस पर अपना चरण रख दीजिये | लेकिन शरीर नापने के बाद भी अभी कुछ बचा है; यह एक बड़ी विचित्र पहेली है जो कह रहा है कि आप मेरा शरीर नाप लीजिये, उसका 'मैं समर्पण करने वाला' हूँ, यह 'अहं भाव' बचा

रहता है | इस दृष्टि से समर्पक अधूरा रह जाता है | यह एक निष्पक्ष और बड़ी सूक्ष्म बात है | राजा बलि ने भगवान् से कहा तो सही कि आप मेरा शरीर नाप लीजिये किन्तु शरीर नापने के बाद भी मेरा शरीर नापा गया, यह वृत्ति बच जाती है | वृत्ति का सर्वापहारी लोप नहीं होता है | अब गोपियों का उदाहरण देखिये | 'गोपियों का प्रेम' नारदजी ने इसीलिए सर्वोच्च माना क्योंकि उनका समर्पण 'सर्वापहारी लोप' की तरह हो जाता है | संस्कृत व्याकरण के अनुसार प्रत्यय जब लगता है तो किसी प्रत्यय में इकार बचता है, किसी में कुछ बचता है किन्तु जब कुछ नहीं बचता तो इसे 'सर्वापहारी लोप' कहते हैं कि कुछ नहीं बचा | उसी प्रकार गोपियों का समर्पण जो हुआ, वैसा किसी का नहीं हुआ क्योंकि उसमें समस्त वृत्तियों का ही लोप हो गया | उदाहरण के लिए चीरहरण का प्रसंग ले लीजिये | चीरहरणलीला में भगवान् ने गोपियों का वस्त्र चुराया, यह सभी जानते हैं; इस लीला में एक गंभीर रहस्य है | वस्त्रों की चोरी कामुकता की दृष्टि से नहीं की गयी | यह इतनी महत्वपूर्ण लीला है कि जिसको समझना ही अत्यन्त कठिन है क्योंकि संसार कामपरायण है | हर व्यक्ति कामी है, चाहे बूढ़ा है, जवान है | यहाँ तक कि मोक्षकाम (मोक्ष की कामना) को भी लोगों ने कितव (कपट) बताया है, वह भी एक स्वार्थ है | इसलिए मोक्षकामी भी कामी है | कामी व्यक्ति 'निष्कामता की सीढ़ी' को कैसे समझ सकता है ? नहीं समझ सकता है | कहीं न कहीं मन में चोरी रह जाती है | आचार्यों ने स्पष्ट लिखा है | यहाँ तक कि बड़े-बड़े दार्शनिकों ने इसे माना है | जो लोग संस्कृत पढ़ते हैं, वे जानते हैं कि न्याय के सिद्धांत मुक्तावली में चीरहरण के प्रसंग के श्लोक ही बहुत जगह आते हैं, जैसे – "नूतन जलधर रुचय, गोपवधूटी दुकूल चौराय |" 'मुक्तावली' न्याय सिद्धांत का प्रसिद्ध ग्रन्थ है और उसके मंगलाचरण में चीरहरणलीला गाई गयी है | अब विचार कीजिये कि कितना ऊँचा दार्शनिक ग्रन्थ और उसमें चीरहरण लीला गाई जा रही है, क्या यह युक्तिसंगत लगता है ? युक्तिसंगत इसलिए लगता है क्योंकि सारा न्यायशास्त्र 'वृत्तियों' पर आधारित है | न्याय प्रमाण-प्रधान दर्शन है, वैशेषिक प्रमेय प्रधान है; इस बात को दर्शनशास्त्र के ज्ञाता लोग जानते हैं | प्रत्यक्ष क्या है, अनुमान क्या है, उपमान क्या है, शब्द क्या है, सारे प्रमाणों का विवेचन न्यायशास्त्र करता है |

प्रमाण क्या है ? तो बताया गया – "प्रमा करणं प्रमाणम् |" जिससे 'प्रमा' की प्राप्ति होती है, उसे 'प्रमाण' कहते हैं अर्थात् वृत्ति, जिस वृत्ति से प्रमा की प्राप्ति होती है, उसे प्रमाण कहते हैं | सारा का सारा न्यायशास्त्र वृत्तियों पर आधारित है | इसीलिए उन्होंने चीरहरणलीला को अपने मंगलाचरण का विषय बनाया कि जो श्रीकृष्ण आवरणात्मक वृत्तियों का हरण कर लेते हैं, उनको हम प्रणाम करते हैं | चीरहरण लीला का यह बड़ा दार्शनिक अर्थ है | ये वृत्तियाँ हमें ढके हुए हैं, परमात्मा को ढके हुए हैं | हमारे अन्तःकरण में प्रभु बैठे हुए हैं | 'वृत्ति' माने होता है अंतःकरण का व्यवहार या बर्तना | हमारा अंतःकरण बहिर्मुख है, बाहर घूमता रहता है | वृत्तियाँ बहिर्मुखी हैं, इसीलिए हम लोग भगवान् से दूर हैं | हमारी वृत्तियाँ 'मैं-मेरापन' की हैं | बस इसी में हम फँसे रहते हैं | साधु भी बन जाते हैं तो यही वृत्ति बनी रहती है कि ये मेरा लोटा है, मेरा कमण्डल है, मेरा चिमटा है, मेरा आसन, मेरी कुटिया है; ये सारी वृत्तियाँ भगवान् को ढँक देती हैं, हमें भगवान् से दूर कर देतीं हैं |

यही बात भागवत में कही गयी है –

यत्सानुबन्धेऽसति देहगेहे ममाहमित्यूढदुराग्रहाणाम् |
पुंसां सुदूरं वसतोऽपि पुर्यां भजेम तत्ते भगवन् पदाब्जम् ||

(श्रीमद्भागवतजी ३/५/४३)

भगवान् हृदय में हैं फिर भी दिखाई नहीं देते हैं, क्यों ? हमारे मन में 'मैं-मेरापन' की वृत्ति घुस गयी है, इसीलिए भगवान् दिखाई नहीं देते हैं, इस मोहजन्य 'ममाहं' की वृत्ति हटने पर सहज ही भगवान् हृदय में आ जाते हैं |

संयम से ही भक्ति सम्भव

बाबाश्री के सत्संग (९/४/१९९६) से संकलित

वल्लभाचार्यजी ने एक बहुत बढ़िया प्रसंग लिखा है; यह कथांश तो नहीं है, सिद्धांत है | यह कम समझ में आता है लेकिन मजबूती की चीज, जड़ तो यही है | इसको समझना थोड़ा कठिन है | वल्लभाचार्य जी कहते हैं – **"यत्संस्कारयोग्यं तज्ज्ञानेन नश्यति, यदयोग्यं तद्परित्यागेन |"** इसको समझो – एक होता है कर्म, एक होता है संस्कार | कोई कहता है कि हम बीड़ी पीते हैं तो बीड़ी पीना उतना बुरा नहीं है, जितना बुरा है उसका संस्कार बनना | अब हृदय में बीड़ी लिख गयी, एक घंटे बाद उसको फिर से बीड़ी की याद आयेगी और बीड़ी माँगेगा | इसी प्रकार लोग तम्बाकू खाते हैं | तम्बाकू शरीर के लिए हानिकारक है, यह तो छोटी बात है, उसका हृदय में जो संस्कार पड़ गया, वह अधिक बुरा है | एक-दो घंटे बाद व्यक्ति फिर से तम्बाकू की याद करता है और खाता है यानि तम्बाकू अब हृदय के भीतर लिख गयी, वह अब मिट नहीं सकती | भोग करना, स्त्री-पुरुष का मैथुनी संपर्क करना बुरा है, यह सभी जानते हैं किन्तु उस भोग से भी अधिक बुरा है उसका 'संस्कार' | भोग के बाद फिर उसकी स्मृति होगी | कहीं भी चले जाओ, जंगल में जाओ, वहाँ भी स्त्री की याद आती है अथवा स्त्री को पुरुष की याद आती है | इसलिए जो संस्कार पड़ गया, वह बुरा है | हृदय की चूनर गंदी हो गयी, मटमैली हो गयी, संस्कार इसमें गलत पड़ गये, इसको कहते हैं नुकसान, भोग का संस्कार सबसे अधिक हानिकारक होता है | इसीलिए वल्लभाचार्यजी ने कहा – "यत्संस्कार योग्यम् तज्ज्ञानेन नश्यति" – जो बातें संस्कार के योग्य हैं, वे तो ज्ञान से नष्ट होंगी यानि बार-बार सोचा जाए – "ओहो ! कितनी अधिक बर्बादी है विषय-भोगों में |" जैसे कोई शराबी है, शराब पीता है; उसको अच्छी तरह ज्ञान कराओ कि शराब कलेजा जला देती है, उसे भूँज देती है, पुण्य नष्ट कर देती है | शराबी नशे में मस्त हो जाता है, चेतनाहीन हो जाता है; इसको शास्त्र में ब्रह्महत्या से भी बड़ा पाप बताया गया है | 'शराब पीना' हत्या से भी बड़ा पाप क्यों है ? इसलिए बड़ा पाप है क्योंकि भगवान् ने तुमको चेतना दी थी और उस चेतना को तुम शराब से नष्ट करते हो | शराबी आदमी को चलने का भी होश नहीं रहता, लड़खड़ाता हुआ चलता है | यह क्या है, न उसे चलने का होश, जुबान भी लड़खड़ाती है; बोलने का होश नहीं, चलने-फिरने का होश नहीं क्योंकि अपनी चेतनता की हत्या कर देता है | इसीलिए 'मदिरापान' को ब्रह्महत्या से कम पाप नहीं माना गया है | पाँच महापापों में 'मदिरापान' भी एक है; इसलिए शराबी व्यक्ति को इसका ज्ञान कराओ | ज्ञान से संस्कार नष्ट होगा, केवल उपदेश से नष्ट नहीं होगा | ज्ञान दिया जाए कि ये सब कितनी नुकसान की चीजें हैं, बार-बार सोचा जाए तो उससे संस्कार नष्ट हो जाता है | इस तरह 'ज्ञान' से तो संस्कार नष्ट होगा और "यद् अयोग्यं तद्परित्यागेन" - जो चीज संस्कार से नष्ट नहीं होती है, जो संस्कार में नहीं है, वह वैराग्य से नष्ट होगी | 'परित्याग' माने वैराग्य से नष्ट होगी | अब ये दो चीजें हुईं – ज्ञान और वैराग्य | ज्ञान से तो संस्कार जलेंगे और जो संस्कार से नहीं अपितु सम्बन्ध से हमारे ज्ञान का नाश करती है, वह चीज 'वैराग्य' से नष्ट होगी | जैसे - रामायण में एक प्रसंग आता है कि वन में भगवान् राम बैठे हैं, सीताजी का हरण हो चुका है, केवल लक्ष्मणजी साथ में हैं | शबरी आदि का प्रसंग हो चुका है | शबरी ने रामजी से कहा था कि आप आगे पम्पासर पर जाइये, वहाँ ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव से आपकी मित्रता होगी; इतने में वहाँ नारदजी आये | विरह में रामजी रोते हुए वन में घूमते थे – हा सीते ! हा सीते !! पुकारते थे | नारदजी ने यह सब देखा तो सोचने लगे कि मेरे शाप के कारण प्रभु को कष्ट हो रहा है | घोर जंगल है, उसमें रामजी की विरह-व्यथित आवाज गूँज रही है; वह विरह भरी आवाज नारदजी ने सुनी तो उसे सुनकर उनका हृदय पिघल गया और वे सोचने लगे कि मैंने प्रभु को इतना अधिक कष्ट दिया, तब वे प्रभु के पास गये और

उनसे बोले कि मैं आपसे एक वरदान माँगने आया हूँ | प्रभु ने पूछा – नारद ! क्या माँगते हो ? नारदजी बोले कि आपके जितने भी नाम हैं जैसे कि अनेकों अवतारों में आपके अनेकों नाम हुए हैं, उन सबमें 'राम' नाम सबसे अधिक प्रसिद्ध होवे | यह वरदान आप मुझे दे दीजिये |

जद्यपि प्रभु के नाम अनेका | श्रुति कह अधिक एक तें एका || राम सकल नामन्ह ते अधिका | होउ नाथ अघ खग गन बधिका || (रामचरितमानस अरण्य का.-४२)

यह वरदान नारदजी ने क्यों माँगा ? उन्होंने सोचा कि मेरे कारण प्रभु वन में इतना कष्ट उठा रहे हैं तो भक्त यही चाहता है कि मेरे प्रभु का नाम फैले इसलिए उन्होंने यह वरदान माँगा | भगवान् बोले – एवमस्तु, ठीक है | इसीलिए 'राम' नाम सबसे अधिक व्यापक हुआ | जब प्रभु प्रसन्न हो गये तो नारदजी ने कहा कि एक बात मैं आपसे और पूछना चाहता हूँ कि जब मैं विश्वमोहिनी से विवाह करना चाहता था तब आपने मेरा विवाह क्यों नहीं होने दिया था ? क्या गृहस्थियों को 'भगवान्' नहीं मिलते हैं ? सब ब्रजवासी भी तो गृहस्थ थे | नारदजी के पूछने पर रामजी ने वही बात बताई जो वल्लभाचार्यजी बता रहे हैं | वल्लभाचार्यजी इतनी गूढ़ बात बता रहे हैं, जिसे समझाने के लिए हमें रामजी का यह प्रसंग बताना पड़ा क्योंकि यह विषय कठिन है | 'रामजी' नारदजी से बोले कि मैंने तुम्हारा विवाह इसलिए नहीं होने दिया था क्योंकि 'माया' दो प्रकार की होती है – (१) संस्कारगत (२) साक्षात् | 'संस्कारगत माया' तो हमारे दिमाग में लिख जाती है और 'साक्षात् माया' वह है जो आँखों से दिखायी पड़ती है | जैसे - मान लीजिये कि हम सिगरेट पीते हैं | बैठे हुए कुछ सोच रहे थे कि अचानक कोई मित्र आया और वह सिगरेट पीने लगा तो उसे देखकर हमने कहा कि एक सिगरेट मुझे भी देना | इस तरह देखकर के संस्कार जग गया यानि एक माया 'संस्कारगत' होती है और एक 'साक्षात्' होती है | सभी स्त्री-पुरुषों के अन्दर भोग के संस्कार होते हैं, लेकिन जब सामने वे पास-पास बैठकर एक-दूसरे को देखते हैं तो देखने से 'संस्कार' और अधिक जगते हैं | अन्तःकरण के भीतर लिखा हुआ है काम, भीतर लिखा हुआ है क्रोध, मोह आदि | अब समझिये कि वैराग्य क्यों किया जाता है ? रामजी ने कहा –

काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि |
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद मायारूपी नारि ||

(श्रीरामचरितमानसजी, अरण्यकाण्ड - ४३)

इनमें भी जो सबसे अधिक दुःख देने वाली 'साक्षात् माया' है, वह है नारी (स्त्री) अर्थात् पुरुष के लिए स्त्री और स्त्री के लिए पुरुष | केवल स्त्री की ही बात नहीं है कि स्त्रियाँ चिढ़ जाएँ कि हमारी बुराई हो रही है, ऐसी बात नहीं है | एक साक्षात् माया है और एक संस्कारगत माया है | वल्लभाचार्यजी कहते हैं कि संस्कार वाली माया का नाश तो 'ज्ञान' से हो जाएगा | हम जंगल में अकेले बैठकर सोच रहे हैं – पैसा छोड़ो, पैसा छोड़ो | बड़े-बड़े धनी लोग मर गये, करोड़ों रुपये छोड़ गये, बैंक में जमा हैं | देखो तो - राजा लोग अपना राज-पाट यहीं छोड़कर मर गये | लेकिन जो साक्षात् माया आँखों के सामने रोज आ रही है तो कहाँ से ज्ञान हो जायेगा ? मान लो हम रोज कथा कह रहे हैं और श्रोता लोग कभी पचास रुपये चढ़ाते हैं, कोई सौ रुपये, कोई पाँच सौ रुपये चढ़ाता है तो उसे प्रतिदिन साक्षात् देखकर संस्कार ताजा होता है | इसीलिए साधक को 'ज्ञान' भी जरूरी है और 'वैराग्य' भी जरूरी है | 'वैराग्य होना' इसलिए आवश्यक है, जिससे कि संस्कार ताजा न बने और 'ज्ञान होना' इसलिए आवश्यक है, जिससे कि पिछले संस्कार समाप्त हो जायें ...|

गौ-सेवकों की जिज्ञासा पर माताजी गौशाला का

Account number दिया जा रहा है –

SHRI MATAJI GAUSHALA, GAHVARVAN, BARSANA, MATHURA

Bank – Axis Bank Ltd **A/C – 915010000494364**

IFSC – UTIB0001058 **BRANCH – KOSI KALAN**

असली शरणागति में अनन्त शक्ति

बाबा श्री के सत्संग (१९/१२/२००९) संकलित

जीव बड़ा दुर्बल होता है, उसमें इतनी शक्ति नहीं होती है कि वह परिस्थितियों से ऊपर उठ करके भगवान् की याद करे, परिस्थितियाँ उसको कुचल देती हैं | इसीलिए भगवान् ने गीता में एक विचित्र बात कही है कि तीन प्रकार के द्वन्द्व होते हैं, इन तीन प्रकार के द्वन्द्वों में जो शान्त रहता है, उसी को परमात्मा की प्राप्ति होती है |

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः |
शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः ||

(श्रीगीताजी ६/७)

'शीतोष्ण' अर्थात् शारीरिक द्वन्द्व, 'सुख-दुःख' अर्थात् मानसिक द्वन्द्व तथा 'मान-अपमान' अर्थात् अहंता कृत द्वन्द्व ; ये द्वन्द्व मनुष्य को पटक-पटक कर निचोड़ देते हैं, उसके मस्तिष्क को खा जाते हैं, चौपट कर देते हैं, ऐसे में वह भगवत्स्मरण क्या करेगा ? जैसे बीमारी है तो मनुष्य उसी के कष्ट में मरता रहता है | श्रीभीष्मपितामहजी तो शर शैय्या पर भी 'भगवत्स्मरण' करते रहे | अनेक प्रकार के सुख-दुःख हैं, मान-अपमान हैं; ये सब जब चित्त को बाधित नहीं करते हैं, जो प्राणी उनमें शान्त रहता है तो उसको परमात्मा मिल जाते हैं | **जितात्मनः..... मानापमानयोः ||** (श्रीगीताजी ६/७) किन्तु ये सब साधारण चित्त की स्थितियाँ नहीं हैं | हम जैसे लोगों का तो सर्दी-जुकाम में ही सारा भजन छूट जाता है |

भुजाओं के द्वारा शत्रु राजा की सम्पूर्ण सेना को स्तम्भित करने के कारण ही श्रीगुरुनिष्ठ बाहुबलजी का नाम 'बाहुबल' पड़ गया; इन्होंने शरणागत राजा को तो भजन करने के लिए कहा था किन्तु ऐसी विषम स्थिति जब शत्रु राजा की सेना पकड़ने के लिए आ रही हो, उस समय भजन में मन कहाँ लगता है लेकिन बाहुबलजी समर्थ महापुरुष थे, उन्होंने राजा से कहा कि तुम भगवान् का भजन करो | राजा ने कहा – 'प्रभो ! सेना आ रही है |' बाहुबलजी बोले – 'आने दो, तुम तो भगवत्स्मरण करो |' शत्रु राजा व उसकी सेना पता लगाते हुए बाहुबलजी के आश्रम की ओर आये कि पराजित राजा यहीं भागकर आया है; अतः इस साधु के आश्रम की ओर चलना चाहिए | जैसे ही सेना आश्रम के पास पहुँची, बाहुबलजी ने अपनी भुजाओं के द्वारा सारी सेना को स्तम्भित कर दिया –

न तो किसी सैनिक का हाथ हिलता, न पैर हिलता था; ऐसे में वे हथियार क्या चलाते ? सारी सेना जड़वत् हो गयी, राजा भी जड़वत् हो गया | तब उसने बाहुबलजी से प्रार्थना की – "हम आपकी शरण में हैं, हम आपके प्रभाव को नहीं जानते थे, हमारे ऊपर कृपा कीजिये |"

बाहुबलजी बोले – "अच्छा, ठीक है |" ऐसा कहकर उन्होंने शत्रु राजा और उसकी सेना को अभय कर दिया | तब वह राजा 'बाहुबलजी' की शरण में आया और क्षमा माँगने लगा | बाहुबलजी 'हरिव्यासदेवजी' के शिष्य थे, जिनके गुरु ही ऐसे प्रतापी थे कि जिन्होंने देवी को भी अपना शिष्य बना लिया, उनके शरणागत शिष्य में स्वाभाविक ही गुरु की सब शक्तियाँ आ जाना सहज है | प्रपत्ति (शरणागति) जहाँ है, वहाँ सभी चीजें जैसे - कर्म, संस्कार, गुण आदि आ जाते हैं | 'पतंजलि योगदर्शन' में ईश्वर-प्राप्ति के अनेक मार्ग तो बताये ही गये हैं, एक सूत्र उन्होंने ऐसा बनाया है – **"वीतराग विषयं वा चित्तं....|"**

अगर तुम कुछ नहीं कर सकते हो किन्तु यदि किसी 'वीतराग महापुरुष' में तुम्हारा चित्त चला गया यानि तुम उसके शरणागत हो गये तो बिना मेहनत के ही तुम्हें 'भगवान्' मिल जायेंगे | परन्तु प्रपत्ति सही होनी चाहिए, ऐसा नहीं जैसे कि हम लोग किसी महापुरुष के पास जाते हैं और केवल दण्डवत-प्रणाम कर लेते हैं; ऐसा नहीं होना चाहिए; 'शरणागति' का मतलब है कि मन से मन मिल जाये | **"आनुकूलस्य संकल्पः प्रातिकूलस्य वर्जनम्"** - ऐसा होना चाहिए | ऐसा नहीं कि गुरु कह रहे हैं कि पूरब जाओ और चेला पश्चिम की ओर जा रहा है, कामाचारिता कर रहा है; ऐसा करने पर अपराध होता है | वस्तुतः प्रपत्ति 'मन' की होती है | 'मन' जहाँ आसक्त है, बस

'प्रपत्ति' वहीं पर है | श्रीकबीरदासजी ने एक पद में लिखा है – **"हम न मरैं, मरिहै संसारा |"** सिकंदर लोदी ने उन्हें जान से मारने का बहुत प्रयास किया - पहले काशी में घोषणा करा दी गयी कि कबीर को कल गंगा में डुबाया जायेगा | उस समय 'कबीरदासजी' काशी के श्रेष्ठ पुरुषों में गिने जाते थे, उनके द्वारा सहज में ही बहुत से चमत्कार हो गये थे; इसीलिए उनके गंगा में डुबाये जाने की घोषणा को सुनकर बहुत से लोग इकट्ठा हो गये | 'कबीरजी' को वहाँ लाया गया और नाव पर बिठाया गया परन्तु वे मस्त और निश्चिन्त थे, उन्हें थोड़ा भी भय नहीं हुआ | मुल्लाओं ने कबीरजी से कहा कि बादशाह को सलाम करो | कबीरदास ने कहा कि मेरा सिर तो केवल **'राम'** के आगे झुकता है और किसी के आगे नहीं झुकता है |

सिकंदर ने कहा कि यह बड़ा घमण्डी है, उसने सैनिकों को आज्ञा दी – 'ले जाओ इसे, गंगा में डुबो दो; अब इसके राम को ही देखना है |' कबीरदासजी अकड़ में नहीं बल्कि अपने 'इष्ट-भक्ति की मस्ती' में नाव में बैठ गये, उनके शरीर से लोहे की साँकलें बड़े-बड़े पत्थरों के साथ बाँध दी गयीं; कबीरजी हँसते रहे | इसके बाद नाव को बीच गंगा की धारा में ले जाकर कबीर को उसी में छोड़ दिया गया | सिकंदर लोदी बड़ा खुश हुआ और बोला कि यह कहता था कि मेरा सिर केवल 'राम' के आगे ही झुकता है, कितना अहंकारी है यह लेकिन अब खत्म हो गया कबीर; ऐसा कहते हुए सिकन्दर अट्टहास करके हँसने लगा | देखने वाले लोग भी यह दृश्य देखकर लौटने लगे कि अब तो 'कबीर' मृत्यु के मुख में चला गया; लेकिन जब लौटने लगे तो गंगा के उस पार से आवाज आई –

हम न मरैं, मरिहै संसारा | हमको मिला जियावनहारा ||
शाकत मरैं, संत जन जीवैं | भरि-भरि नाम रसायन पीवैं ||
हरि न मरैं, हम काहे को मरिहैं | हरि मरिहैं तो हमहू मरिहैं ||

अंत में कबीरदासजी कहते हैं कि यह मन का खेल है, मैंने अपने मन को 'भगवान्' में मिला दिया है | इसके विपरीत हम जैसे लोगों का मन मरणधर्मा संसार में है, इसीलिए हम लोग मरते हैं |

कहै कबीर मन, मनहि मिलावा |
अमर भये हम, हरि पद पावा ||

हमारा मन कहाँ है ? यदि यह मरणधर्मा संसार में है तो हम मरेंगे ही | मन यदि कृष्ण में है तो संसार की कोई भी शक्ति, यहाँ तक कि काल-शक्ति भी बाधित नहीं कर सकती | इसीलिए भगवान् ने गीता में कहा –

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय |
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः ||

(श्रीगीताजी १२/८)

मरता कौन है ? भगवान् कहते हैं –

अश्रद्धानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप |
अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ||

(श्रीगीताजी ९/३)

जिसका मन संसार में है, वह मरता है |

कबीरदासजी गंगा में नहीं डूबे; फिर भी मूर्ख सिकंदर की आँखें नहीं खुलीं और उसने आदेश दिया कि इसे पकड़कर आग में जला दो | 'कबीर' को फिर से पकड़ा गया; बड़ी तेजी से यह खबर काशी में फैली | अपार लकड़ियों का समूह एकत्रित किया गया | इसीलिए कबीर को प्रह्लाद का अवतार माना जाता है; उसी घटना की पुनरावृत्ति हुई जैसे प्रहलाद को गोद में लेकर उनकी बुआ आग में बैठी थी | 'कबीर' को लकड़ियों के ढेर में बिठा दिया गया और वे निर्भय बैठे रहे; किसी मुल्ला ने उनसे कहा कि अब भी तू 'राम-राम' कहना छोड़ दे, पानी से तो बच गया; कोई जादू-टोना जानता होगा लेकिन आग से कैसे बचेगा ? बादशाह के आगे सिर झुका | 'कबीर' ने कहा कि मेरा सिर तो केवल **'राम'** के आगे ही झुकता है और किसी के आगे नहीं झुकता है | सिकंदर ने आदेश दिया – 'इसे जला दो और जब तक सारी लकड़ियाँ राख नहीं हो जाएँगी, मैं यहीं बैठा रहूँगा | इसका जादू-टोना मुझे देखना है |' सैकड़ों मन लकड़ियाँ जलकर राख हो गयीं | सब लोग वहाँ बैठे रहे और जब लकड़ी राख हो गई, तब वे बोले – 'अब चलो, कबीर तो राख हो गया |' जब सब चलने लगे तो फिर से आवाज आई –

हमको मिला जियावनहारा |
हम न मरैं मरिहै संसारा ||

इस प्रकार से कबीरदासजी की श्रीभगवान् में अटल आस्था थी ...| श्रीबाहुबलजी व श्रीकबीरदासजी का चरित्र इसीलिए सुनाया कि हमें ऐसे भक्त-चरित्रों को पूर्ण श्रद्धा-विश्वास के साथ श्रवण-मनन करने से सहज ही विशुद्ध भक्ति-भाव की प्राप्ति हो जाती है | आराधना करने से भक्त में अनन्त शक्ति आ जाती है, जिससे असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाता है | जैसे - राजा बलि के सामने भगवान् भी खड़े नहीं हो पाए, भीख माँगना पड़ा क्योंकि 'आराधना' अनन्त शक्ति का केन्द्र है | जब असुरों ने देवताओं को पराजित कर दिया, उन्हें स्वर्ग से भगा दिया तो देवता भिखारी बन गये और ब्रह्माजी के पास पहुँचे | ब्रह्माजी ने कहा – अरे, तुम लोग अपने स्वर्ग की बात कहते हो किन्तु मैं तो चिन्तित हूँ कि कहीं ये 'असुर' मेरा ब्रह्मलोक न छीन लें |

सम्प्रत्युपचितान् भूयः काव्यमाराध्य भक्तितः |
आददीरन् निलयनं ममापि भृगुदेवताः || श्रीमद्भागवतजी (६/७/२३)

इन असुरों ने अपने गुरु शुक्राचार्य की आराधना की है; गुरु की इनके ऊपर कृपा है, इसलिए ये मेरा ब्रह्मलोक भी छीन सकते हैं |

न विप्रगोविन्दगवीश्वराणां भवन्त्यभद्राणि नरेश्वराणाम् |
(श्रीमद्भागवतजी ६/७/२४)

गो, गोविन्द और विप्र (गुरु) में आस्था रखने वाले का कभी अभद्र नहीं होता है |

ये सब भक्तजनों के उदाहरण इसीलिए दिए गये कि कलियुग में भी ऐसे संत-महापुरुष हुए हैं, जिन्होंने अपनी सुदृढ़ निष्ठा व आराधना-शक्ति से नास्तिक लोगों को आश्चर्यचकित कर दिया और वे नतमस्तक होकर भक्त बन गए ...|

.....

विकारों की जड़ 'प्रमदा'

बाबाश्री के सत्संग (९/४/१९९६) से संकलित

श्रीरामचरितमानस के अरण्यकाण्ड में वर्णन आता है कि भगवान् राम ने नारदजी को उपदेश दिया है, उसमें 'स्त्री' की वर्षा ऋतु से भी उपमा दी है | जैसे - वर्षा में मेंढक पैदा हो जाते हैं | यह विज्ञान भी मानता है कि मेंढक जब मर जाता है तो मरे हुए मेंढकों की खाल पड़ी रहती है और जब वर्षा होती है तो उसी मरे हुए मेंढक की खाल में नया मेंढक पैदा हो जाता है तथा टर्र-टों करने लगता है; इस तरह मरे हुए मेंढक फिर से जी जाते हैं | रामजी बोले कि स्त्री भी ऐसी है कि तुम चाहे विधुर बन जाओ किन्तु स्त्री की आसक्ति तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ेगी | साक्षात् माया से मरे हुए लोगों के अन्दर भी इच्छा पैदा हो जाती है | इसीलिए स्त्री वर्षा ऋतु है | एक वैज्ञानिक ने परीक्षण के लिए बहुत सी हड्डियों को पास रखा परन्तु उनमें चुम्बक पैदा नहीं हुआ | दो हड्डियों में चुम्बक था | पता लगाया कि एक हड्डी स्त्री की थी और दूसरी हड्डी पुरुष की थी | मुर्दा हो जाने पर भी उनमें चुम्बक है | पुरुष-पुरुष की हड्डी को पास में रखा तो कोई चुम्बक नहीं, स्त्री-स्त्री की हड्डी को पास में रखा तो कोई चुम्बक नहीं | ये डॉक्टर-वैज्ञानिक तो अब परीक्षण करते हैं, रामायण में गोस्वामी जी ने पहले ही लिख दिया – मोह न नारि नारि कै रूपा | इसीलिए रामचन्द्र जी कहते हैं –

काम क्रोध मद मत्सर भेका | इन्हहि हरषप्रद बरषा एका ||

भेका माने मेढक | काम,क्रोध आदि मेंढक हैं | कोई लड़की किसी लड़के के पास पहुँचती है तो अपने आप ही हँसने लगेगी और अपने आप ही नजाकत से बोलने लग जाएगी, काजल-टीकी आदि का श्रृंगार करने लग जाएगी | इसी तरह पुरुष पहुँचता है स्त्री के पास तो अपने आप ही बढ़िया वस्त्र पहनकर अदा से चलेगा और हंसेगा | काम क्रोध मद मत्सर भेका | इन्हहि हरषप्रद बरषा एका || ये काम आदि मेंढक हैं जो टर्र-टर्र कर रहे हैं क्योंकि स्त्री वर्षा ऋतु है | स्त्री रूपी वर्षा ऋतु के आते ही मेंढक अपने आप ही टर्र-टर्र करने लगते हैं, मरे हुए मेंढक भी टर्र-टर्र करते हैं | बसन्त, ग्रीष्म और वर्षा, तीन ऋतुएँ चली गयीं | अब चौथी ऋतु आई शरद | शरद ऋतु जब आती है और रात को

चन्द्रमा निकलता है तो उसे देखकर सैकड़ों-हजारों कुमुदिनियाँ खिल जाती हैं | दिन में बंद रहती हैं और चन्द्रमा जैसे ही रात को निकलता है, उसे देखकर तुरंत ही कुमुदिनियाँ खिल जाती हैं | वैसे ही जहाँ स्त्री आती है – **दुर्बासना कुमुद समुदाई |**

तिन्ह कहँ सरद सदा सुखदाई ||

दुर्वासनायें पैदा हो जाती हैं | लड़का सोचता है कि चलो लड़की के साथ एकान्त में चलें, चलो, आज वहाँ सिनेमा देख आयें | पैसा नहीं है तो कहाँ से झटकें, किसको धोखा दें, दुनिया भर के पापड़ मनुष्य क्यों बेलता है, घूस लेता है, छिपाव करता है, झूठ बोलता है, माँ-बाप से झूठ बोलता है, गुरु-गोविन्द से झूठ बोलता है | ये सब दुर्वासनायें हैं | ये बिना सिखाये ही तुम्हारे भीतर आ जाएँगी, तुमको हजार बार झूठ बोलना पड़ेगा, हजार बार कपट करना पड़ेगा, हजार बार छिपाव करना पड़ेगा | ऐसा हो ही नहीं सकता कि तुम ऐसा न करो क्योंकि यह शरद ऋतु है | बिना सिखाये ही इसके अन्दर सारी वासनायें पैदा होतीं हैं | ऐसा भगवान् राम ने कहा है | इसके बाद वे कहते हैं कि स्त्री जाड़े की ऋतु है |

धर्म सकल सरसीरुह बृंदा |

होइ हिम तिन्हहि दहइ सुख मंदा ||

जाड़े में किसी सरोवर में बहुत से कमल खिले हुए हैं लेकिन रात को जब पाला पड़ता है तो एक बार में ही सारे कमल भुँज जाते हैं जैसे किसी ने आग में भूँज दिया हो | ऐसा खेतों में भी होता है, सरसों आदि के खेत में जब ज्यादा पाला पड़ता है तो ऐसा लगता है जैसे किसी ने आग में भूँज दिया हो | हजारों मन का नुकसान थोड़ी देर में हो जाता है | भगवान् राम कहते हैं कि उसी प्रकार तुमने जितने भी धर्म किये थे, उसे स्त्री आकर नष्ट कर देती है | मनुष्य एक तो धर्म करता ही नहीं है | मान लो थोड़ा बहुत कुछ धर्म किया, विप्र सेवा किया, मातृ सेवा किया, गुरु सेवा किया, उस सबको स्त्री आकर भूँज देती है | कैसे भूँजती है ? पति से कहती है कि अपने माता-पिता, भाई-बहन आदि सबसे अलग हो जाओ | पति ने ने पूछा क्यों-तो कहती है कि मुझसे तुम्हारी माँ की बातें नहीं सहन की जाती हैं |

"अरे, मोपे बोल सह्यो न जाए, न जाए, जल्दी से न्यारो है जा तू |" स्त्री पति से पचासों बातें बनाकर कहती है कि तेरी माँ मुझसे ऐसे बोलती है, तेरी बहन ऐसे बोलती है, ये कोई परिवार है, ऐसे परिवार में तो आग लगे | जल्दी से अलग हो जाओ | ऐसा स्त्री इसलिए कहती है क्योंकि वह एकाधिकार चाहती है | कहती है मोपे बोल सह्यो न जाय | मैं सह नहीं सकती हूँ | तेरी माँ आफत है | अब तो पुरुष के मातृ धर्म, पितृ धर्म आदि सब जल गये | जैसा कि भगवान् राम ने कहा- **धर्म सकल सरसीरुह बृंदा |**

होइ हिम तिन्हहि दहइ सुख मंदा ||

मंद सुख देकर स्त्री ठग लेती है | मंद सुख क्या है, मल-मूत्र का मैथुनी भोग ही मंद सुख है | रात को पुरुष से लिपटकर सो जाती है, मंद सुख दे देती है और फिर उसे सबसे अलग कर देती है, कहती है अपनी माँ को धक्का दो, भाई-बहन को धक्का दो और पिता को धक्का दे आओ | इस प्रकार वह मल-मूत्र का सुख देकर सब धर्म रूपी कमल को जला बैठी और बुद्धू पुरुष मारा गया | भगवान् राम नारद जी से बोले कि इसीलिए मैंने तुम्हारा विवाह नहीं होने दिया था | राम जी कहते हैं कि अंत में शिशिर ऋतु आती है | इस ऋतु में जवास बहुत जल्दी बढ़ जाती है |

पुनि ममता जवास बहुताई |

पलुहइ नारि सिसिर रितु पाई ||

ममता बहुत बढ़ जाती है | इतनी बढ़ जाती है कि उधर माँ बीमार है, बहुत खांसी आती है | दिन भर खांसती रहती है लेकिन लड़का माँ का इलाज नहीं कराता है और सोचता है कि बुढ़िया मरती भी नहीं है | उसकी पत्नी को थोड़ी सी छींक भी आती है तो तुरंत डॉक्टर को बुलाता है, दवाइयाँ देता है | स्त्री में ममता इतनी बढ़ जाती है कि पुरुष के बूढ़े माँ-बाप बीमारी में मरते रहते हैं तो सोचता है कि कोई बात नहीं, इन्हें तो वैसे भी मरना है और वह उनकी सेवा नहीं करता है | ममता रूपी जवास इतनी बढ़ गयी, क्योंकि शिशिर ऋतु आ गयी | भगवान् राम नारद

जी से कहते हैं कि इसीलिए मैंने तुम्हारा विवाह नहीं होने दिया था |

पाप उलूक निकर सुखकारी |

नारि निबिड़ रजनी अँधिआरी ||

राम जी आगे कहते हैं कि स्त्री अँधेरी रात है | जितने भी पाप होते हैं, सब अँधेरे में होते हैं | जितनी भी चोरी होती है, अँधेरे में होती है | छिनारपन (व्यभिचार) जितना भी होता है, अँधेरे में होता है | निबिड़ माने घना अंधकार, जिसमें हाथ से हाथ नहीं दिखता | संसार में जितने भी खराब काम होते हैं, सब स्त्रियों के कारण होते हैं | इसी तरह स्त्री के लिए पुरुष अँधेरी रात है | अंत में एक और बात राम जी कहते हैं – **बुधि बल सील सत्य सब मीना |**
बनसी सम त्रिय कहहिं प्रबीना ||

मछली पकड़ने वाले काँटे को बन्सी कहते हैं | मछली पकड़ने वाले काँटे में आटे की गोली लगाकर तालाब के भीतर छोड़ देते हैं | मछली जब आती है और आटे की गोली को खाती है तो वह काँटा उसके गले में चुभ जाता है | जब काँटे का वजन बढ़ जाता है तब मछली पकड़ने वाला समझ जाता है कि मछली फँस गयी तब फिर वह मछली को ऊपर खींच लेता है और उसे निकालकर बाहर फेंक देता है | ऐसे ही वह अनेकों मछलियों को निकालता है और फेंकता है | ऐसे ही स्त्री क्या करती है, पुरुष के अन्दर जो अच्छी बुद्धि होती है, बल, शील, सत्य आदि जो गुण होते हैं, उन्हें नष्ट कर देती है | शील क्या है, शील है बड़ों का सम्मान करना | बुद्धि क्या है, बड़ों की पूजा करना | स्त्री चौबीस घंटे पुरुष के पास बैठकर उसके घर वालों की बुराई करती है कि तुम्हारी माँ ऐसी है, तुम्हारी बहन ऐसी, तुम्हारा बाप ऐसा, तुम्हारा खानदान ऐसा, इसमें आग लगे, मेरे पीहर में कितने अच्छे लोग हैं, यहाँ जैसा दुःख तो मैंने कभी सहा नहीं | तुम्हारे घर में तो सब निशाचर भरे हुए हैं | ऐसा तो आफत का ससुर मैंने नहीं देखा, ऐसी तो आफत की सास मैंने नहीं देखी | ये सब मुझे खा गये | ये क्या है, ये बंसी है | जितने भी पुरुष में अच्छे गुण होते हैं, अच्छी बुद्धि होती है बड़ों का सम्मान करना, उन सबको स्त्री निकालकर फेंक देती है | कहती है कि अपने बड़ों को लट्ठ लगाओ | पुरुष के शील गुण को बाहर निकालकर फेंक देती है | भगवान् राम नारद जी से कहते हैं कि इसीलिए मैंने तुम्हारा विवाह नहीं होने दिया | अंत में प्रभु ने एक बात और कह दी |

अवगुन मूल सूलप्रद प्रमदा सब दुःख खानि |
ताते कीन्ह निवारन मुनि मैं यह जियँ जानि ||

(रामचरितमानस अर.का. – ४४)

स्त्री साक्षात् माया है, क्यों ?

दीप सिखा सम जुबति तन मन जनि होसि पतंग |
भजहि राम तजि काम मद करहि सदा सतसंग ||

(रामचरितमानस अर.का.-४६)

मन क्या है ? यह एक पतंगा है, जो दीपक पर जल जाता है | यहाँ पर तुलसीदास जी कह रहे हैं कि भले ही तुम मर जाओ लेकिन मन नहीं जलेगा | चिता पर शरीर फुंक जाता है, मन नहीं फुंकता है | प्रलय में भी मन नहीं फुंकेगा | मन को परमाणु बम नहीं फूँक सकता | प्रलय में सारा ब्रह्माण्ड जल जाता है किन्तु मन नहीं जलता है | मन को कौन जलाता है, मन को स्त्री जलाती है और स्त्री के लिए पुरुष जलाता है | मन जल गया, धर्म जल गया, कुआँ में गये माँ-बाप, गुरु और गोविन्द | इसलिए स्त्री साक्षात् माया है | इसी बात को वल्लभाचार्य जी कह रहे हैं | उन्होंने एक लाइन कही थी, उसको समझना कितना कठिन था | यदि इतना विस्तार न करते तो उसे समझा नहीं जा सकता था | ये आचार्य लोग हैं, ये भगवत्स्वरूप हैं | ये थोड़े ही शब्दों में ऐसी बात कह जाते हैं जिसको पकड़ना ही हम लोगों के लिए कठिन पड़ता है | वे कहते हैं – **"यत्संस्कार योग्यं तज्ज्ञानेन नश्यति"** – जो संस्कार की माया थी, वह तो ज्ञान से नष्ट हुई | **"यद् अयोग्यं तद् परित्यागेन"** – ये बड़ा कठिन है | जो संस्कार के लायक नहीं है, साक्षात् माया है, जो ज्ञान का नाश करती है, उसको वैराग्य से छोड़ दो यानी दूर से छोड़ दो, मर्यादा से रहो | वहाँ नहीं जाओ | इस तरह से तुम्हारा पाप नष्ट होगा, नहीं तो नष्ट नहीं हो सकता चाहे करोड़ों जन्मों तक साधन कर लो | इतनी ऊँची बात वल्लभाचार्य जी ने कही है | इसी बात को श्रीकृष्णचैतन्यमहाप्रभु जी ने कहा था –

निष्किञ्चनस्य भगवद्भजनोन्मुखस्य पारं परं जिगमिषोर्भवसागरस्य | संदर्शनं विषयिणामथ योषिताञ्च हा हन्त हन्त विषभक्षणतोऽप्य साधु ||

(श्रीप्रबोधानन्दसरस्वतीजी कृत श्रीचैतन्यचन्द्रोदय नाटक ८/२७)

निष्किञ्चन होने के बाद ही भवसागर पार कर सकते हो; कोई निष्किञ्चन है, भगवद्भजन करना चाहता है और भवसागर से पार जाना चाहता है, उसके लिए विषयी लोगों व साक्षात् माया रूपिणी स्त्रियों के दर्शन की अपेक्षा जहर खाकर मर जाना अच्छा है, इनका दर्शन ठीक नहीं है; यही बात भगवान् राम भी कह रहे हैं – "दीप सिखा सम जुबति तन....|" अरे, तेरा मन जो परमाणु बम से नहीं जल सकता, उसको स्त्री जला देगी | यह ऐसी अग्नि है | इसी प्रकार स्त्री के लिए पुरुष अग्नि है | तुम्हारा मन बच नहीं सकता | मन, जिसे प्रलय की अग्नि नहीं जला सकती, चिता की अग्नि नहीं जला सकती, उसको स्त्री रूपी अग्नि जला देती है | यही वल्लभाचार्य जी ने कहा - **"तप्त जीवनम्"** का अर्थ उन्होंने यह किया कि जीवन तुम्हारा जो तप रहा है तो एक संस्कार ताप होता है और एक संस्कार ताप नहीं, जो संस्कार न होकर के साक्षात् रूप से सम्बन्ध से ज्ञान का नाश करता है | वल्लभाचार्य जी बोले – **"यत्संस्कारयोग्यं तज्ज्ञानेन नश्यति यद् अयोग्यं तद्परित्याग अतैव स्मार्तैसंस्काराशक्तै परित्याग |"** – संसार में जो आसक्त लोग हैं, उनके लिए वैराग्य-परित्याग जरूरी है | दोनों चीजें (ज्ञान, वैराग्य) ताप का नाश करती हैं | यदि ऐसा नहीं होगा तो ताप का नाश नहीं होगा | सदा तुम जलते ही रहोगे, कभी भी शान्त नहीं हो सकते |

.....

'नियत आहार' से असली आराधना

बाबा श्री के सत्संग (२५ / २/ २००३) से संकलित

सूरदासजी जैसे महापुरुषों ने अपने पद में अल्प-आहार करने को क्यों लिखा है या भगवान् ने गीता में नियत आहार करने को क्यों कहा है ? इसका कारण है कि हमारे शरीर में जो राजस-तामस बढ़ जाता है, वही बीमारी है | यदि शरीर सात्त्विक रहे तो बीमारी कभी नहीं हो सकती, न थी, न है, न होगी | अन्न का तामस रूप है - मल | खूब खाते हैं लोग और दो-तीन बार शौच के लिए जाते हैं | इसका मतलब है कि उसमें तामस चीज ज्यादा है | अन्न का राजस रूप है - माँस | यदि राजस-तामस अंश न रहे, सूक्ष्म आहार हो तो 'अन्न' सात्त्विक रूप से 'मन' बन जाता है | अन्न का सात्त्विक रूप है 'मन', किन्तु हम लोग जो 'अन्न' खाते हैं, उसका अधिकतर अंश 'राजस और तामस' में चला जाता है | हम लोग अपने 'अन्न' के द्वारा या तो खूब 'मल' बनाते हैं या खूब 'माँस' बढ़ता है | इस तरह 'अन्न' का जो सात्त्विक अंश है 'मन', वह नहीं बन पाता है, वह ऐसे ही गड़बड़ रहता है | राजस, तामस बढ़ गया तो 'मन' बीमार हो जाता है | मनुष्य आलसी, प्रमादी बन जाता है और सोचता है कि कुछ मत करो | इस प्रकार 'पृथ्वी तत्त्व' के ये तीन रूप बताये गए | अब आगे है 'जल तत्त्व' | हम जो पानी पीते हैं, इसके भी तीन रूप होते हैं | जैसे - पृथ्वी तत्त्व के तीन रूप हैं – मन, माँस और मल; इसी तरह 'जल तत्त्व' के भी तीन रूप हैं | जल का तामस रूप है – मूत्र | जल का राजस रूप है 'रक्त' | हमारे शरीर में जो रक्त बनता है, उसमें जलीय अंश अधिक होता है, वह राजस रूप है | हमारे जैसे लोगों के सन्दर्भ में, जैसे अन्न को लिया तो उसका राजस और तामस रूप ही अधिकतर बनता है | 'मन' सात्त्विक नहीं बन पाता, प्रबल नहीं बन पाता है क्योंकि हमारा सम्पूर्ण 'पृथ्वी तत्त्व' राजस और तामस में चला जाता है | इसी प्रकार हम लोग जल खूब पीते हैं, उससे खूब मूत्र बनता है, रक्त बनता है लेकिन जल का सात्त्विक रूप 'प्राण' नहीं बन पाता है | 'जल तत्त्व' का सात्त्विक रूप है 'प्राण'; वह प्राण ही आयु है, जीवन है; इसलिए यदि 'जल' का सात्त्विक अंश 'प्राण' अधिक बने तो प्राणशक्ति बढ़ जाती है | अब आगे है - तेज तत्त्व | 'तेज

तत्त्व' जिन पदार्थों में होता है, उसके तीन रूप होते हैं - तामस रूप 'हड्डी (अस्थि)', राजस रूप 'मज्जा' और सात्त्विक रूप 'वाणी' है | तेजस्वी व्यक्ति की वाणी में तेज रहता है | इसी तरह वायु है; जो वायु हम लोग लेते हैं, इसका तामस रूप है 'अपानवायु' | खूब अन्न खा लेने पर वायु भी तामस बन जाती है और नीचे का सुर भी बजने लगता है, वह वायु का तामस रूप है | इसी तरह वायु का राजस रूप भी होता है, वह शरीर में क्रिया करता है, उसके चौरासी रूप होते हैं, 'वायु' चौरासी प्रकार की बताई गयी है | वायु का सात्त्विक रूप 'जीवनशक्ति' है | 'प्राणायाम' में 'आयाम' का अर्थ है - बढ़ना, प्राण अर्थात् प्राणवायु; अतः 'प्राणायाम' का अर्थ हुआ 'प्राण का बढ़ना'; अगर वायु का सात्त्विक रूप बढ़ता जाए तो 'जीवनशक्ति' बढ़ती जाती है | इसी तरह 'आकाश तत्त्व' है; जब शेष चार तत्त्व सात्त्विक हो जाते हैं तो 'आकाश' सात्त्विक हो जाता है | 'आकाश' कहते हैं 'अवकाश' या क्षेत्र को | अब शरीर में इतना अधिक तामस हो जाता है कि रक्त मोटा हो जाता है और उसमें कोलेस्ट्राल बढ़ जाता है, तब उसमें आकाश के लिए जगह ही नहीं रह जाती है; अन्यथा आकाश तो सर्वत्र चाहिए | इसीलिए 'आकाश' को राजस-तामस के कारण 'अवकाश' ही नहीं रहता है | अगर ये सब चीजें सात्त्विक रहतीं हैं तो आकाश को अवकाश रहता है और सात्त्विक आकाश रहता है तो उसमें 'शब्द' की प्राप्ति हो जाती है, उसका सिद्ध रूप है - अनाहतनाद आदि | इसलिए पञ्च तत्त्वों को हम आहार में इस प्रकार ग्रहण करें कि हर तत्त्व का सात्त्विक अंश हमारे शरीर में अधिक बढ़े | भागवत के एकादश स्कन्ध में भगवान् ने इसी बात को कहा है कि सतोगुण से ही भजन में वृद्धि होती है | सतोगुण ही अधिक रहने से जीव 'अध्यात्म' की ओर चलता है; नहीं तो हम जैसे लोग साधु बन जाने के बाद भी अधिकतर सोते ही रहते हैं क्योंकि जीवन में सात्त्विकता नहीं है | इसलिए श्रीभगवान् ने भागवत में उद्धवजी से कहा है – (श्रीमद्भागवतजी ११/१३/१)

सत्त्वं रजस्तम इति गुणा बुद्धेर्न चात्मनः|
सत्त्वेनान्यतमो हन्यात् सत्त्वं सत्त्वेन चैव हि ||

'सत, रज और तम' बुद्धि के गुण हैं, 'आत्मा' के गुण नहीं हैं | भगवान् बोले कि 'सतोगुण' को पकड़ करके रजोगुण और तमोगुण पर विजय प्राप्त कर लेनी चाहिए | हर समय ऐसी दृष्टि रखनी चाहिए क्योंकि तुम्हारे शरीर में, मन में, बुद्धि में यदि रजोगुण और तमोगुण बढ़ेगा तो तुम मर जाओगे (पतन हो जायेगा), निश्चित ही तुमको संसार मिलेगा | इसलिए भगवान् ने कहा कि 'सतोगुण' से रजोगुण, तमोगुण को मार डालो, बिल्कुल समाप्त कर दो और फिर 'सतोगुण' से सतोगुण को मार डालो, इस तरह गुणातीत हो जाओ; इसके बाद विशुद्ध सत्त्व (भगवान् का चिन्मय तत्त्व) आ जाएगा | ऐसा भगवान् ने गीता में भी कहा है –

काम एष क्रोध एष रजोगुण समुद्भवः |
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ||

(श्रीगीताजी ३/३७)

वैरी ये काम, क्रोध (रजोगुण, तमोगुण) ही हैं | इसलिए –

तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ |
पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ||

(श्रीगीताजी ३/४१)

इसी महापापी (राग-द्वेष) को तुम मार डालो | 'प्रजहि' माने इस तरह से मार कि इनकी राख भी न मिले, जैसे - मुर्दा फूँकते हैं तो उसकी राख को बहा देते हैं | गंगा आदि नदियों के किनारे जहाँ मुर्दा फूँका जाता है, वहाँ फूँकने के बाद उसको पानी में बहा देते हैं तो राख भी समाप्त हो जाती है, राख भी नहीं छोड़ते हैं | जहाँ नदी नहीं है, वहाँ भी मुर्दा फूँकने के बाद हड्डी बीनकर उसे वहाँ से हटा देते हैं, इसे 'सकेलनी' कहते हैं; हड्डी तक नहीं रहनी चाहिए | इसलिए गीता में भगवान् अर्जुन से कहते हैं कि कामना को इस तरह नष्ट कर कि 'जहि नहीं प्रजहि' – कामना का कोई संस्कार भी हृदय में न रहे | सामने बर्फी का थाल हो लेकिन तुम्हारे मन में उसे खाने की इच्छा नहीं होनी चाहिए | सामने लड्डू का थाल है लेकिन मन उधर आकर्षित नहीं हो रहा है यानि उसके संस्कार ही नष्ट कर दे | **"प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम्"** – क्योंकि रजोगुण से उत्पन्न यह 'काम' तेरे ज्ञान को ही नहीं विज्ञान को भी नष्ट कर देगा | 'विज्ञान' माने

अनुभवात्मक (practical) ज्ञान अर्थात् जहाँ से अनुभव होता है, वहाँ से भी तू गिर पड़ेगा; इसलिए इसे समाप्त कर दे | यही बात भगवान् ने भागवत में कही है कि 'सतोगुण' से रजोगुण, तमोगुण को समाप्त कर दे; उसको समाप्त कैसे करेगा ? इसके लिए यह तालिका बताई गयी है – 'अन्न' का तामस अंश 'मल', राजस अंश 'माँस', सात्त्विक अंश 'मन' बनता है | 'जलतत्त्व' का तामस अंश 'मूत्र', राजस अंश 'रक्त' और सात्त्विक अंश 'प्राण' बनता है | 'तेजतत्त्व' का तामस अंश 'अस्थि', राजस अंश 'मज्जा' व सात्त्विक अंश 'वाणी' है | 'वायु' का तामस अंश अपानवायु, राजस अंश है 'शरीर में चौरासी प्रकार की वायु' जो क्रिया करती हैं, सात्त्विक अंश है 'जीवनशक्ति' जो जीवन देगी | पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु आदि चारों तत्त्व जब सात्त्विक हो जायेंगे, तब 'आकाश तत्त्व' अपने आप ही सात्त्विक हो जाएगा | इसलिए भगवान् कहते हैं कि 'सतोगुण' से तो रजोगुण और तमोगुण को मार डाल अर्थात् इस तरह का आहार कर कि तेरे आहार से 'पृथ्वी तत्त्व' का भी सात्त्विक अंश अधिक बने, 'जल तत्त्व' का भी सात्त्विक अंश अधिक बने; इतना मत खा कि उसका राजस और तामस रूप ही रह जाये | जब हम भोजन करते हैं तो उसका राजस- तामस रूप ही अधिक बनता है, सात्त्विक रूप नहीं बनता है | तब ऐसा होता है कि 'राजस, तामस' मिलकर सतोगुण को मार डालते हैं | "ऊर्ध्वं गच्छन्ति डक्कारः अधो गच्छन्ति वायवः |" ऊपर से खूब डकार आती है और नीचे से खूब अपानवायु निकलती है; ऐसी स्थिति में सात्त्विक अंश क्या बनेगा ? इसलिए हम इस तरह से भोजन करें कि 'पृथ्वीतत्त्व' हम जो खाते हैं, उसका सात्त्विक अंश 'मन' अधिक बने, मल और माँस न बने | 'जलतत्त्व' जो हम ग्रहण करते हैं, उसका सात्त्विक अंश 'प्राण' बने, मूत्र और रक्त उतना न बने | उसी तरह हम 'तेजतत्त्व' लेते हैं, उससे 'अस्थि और मज्जा कम बने, न के बराबर बने', 'वाणीतत्त्व' अधिक बने | उसी तरह 'वायु तत्त्व' जो हम लेते हैं, उसका तामस अंश अपानवायु और राजस अंश चौरासी प्रकार की वायु न बने (शरीर के भीतर चौरासी प्रकार की जो वायु है, जब वह विकृत हो जाती है तो उससे गठिया आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं; यह शरीर में रहने वाली उस वायु का ही रूप है, जो चौरासी प्रकार की होती है); अतः वायु का इस तरह उपयोग करो कि उसका राजस-तामस रूप न बने; वायु का सात्त्विक रूप 'जीवनशक्ति' अधिक बने | इस तरह जब चारों तत्त्व सात्त्विक हो जायेंगे, तब 'आकाशतत्त्व' सात्त्विक हो जाएगा | इसलिए भगवान् ने भागवत में कहा कि 'सतोगुण' के द्वारा रजोगुण, तमोगुण को मार डाल और फिर 'सतोगुण' के द्वारा सतोगुण को मार डालो; ऐसा कैसे करें ? तो उदाहरण के द्वारा इसे समझो | सतोगुण दो प्रकार का होता है, इसे गीता के द्वारा समझो | सतोगुण के द्वारा सतोगुण को मारना है तो पहले यह समझना चाहिए कि सतोगुण में कितने तत्त्व होते हैं, सतोगुण है क्या ? भगवान् ने गीता में बताया – **तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम् |** (श्रीगीताजी १४/६) पहली बात तो यह है कि सतोगुण निर्मल होता है, प्रकाशक होता है, अनामय अर्थात् इसमें कोई बीमारी नहीं होती है | आपके शरीर में, मन में, इन्द्रिय में जो भी बीमारी होती है, वह 'रजोगुण, तमोगुण' के कारण होती है, सतोगुण से कोई बीमारी नहीं होती है; पहले इसे समझ लेना चाहिए | थोड़ी-सी कोई बीमारी होती है, छींक भी थोड़ी-सी आती है, वह रजोगुण-तमोगुण के कारण होती है, सतोगुण से नहीं आती है | सतोगुण तो अनामय है, उसमें बीमारी है ही नहीं | हम लोग बीमार रहते हैं और कहते हैं कि हम बड़े सतोगुणी हैं; यह गलत बात है, धोखा है, अपने-आप को न समझना है | भगवान् ने कहा है कि सतोगुण तो निर्मल होता है, 'मन' से शुरू होता है, उसका आधार 'मन' होता है | सारी गंदगियाँ मन में रहती हैं | डॉक्टरों के पास लोग जाते हैं और कहते हैं कि मेरे मन में टेंशन है यानि मन में मैल है | 'शरीर का मल' तो दिखाई देता है लेकिन यह 'टेंशन' क्या है ? यह 'मन का मल' है, उसको प्राणी समझता नहीं है | हम किसी व्यक्ति को समझा रहे थे, उसके मन में बड़ी अशांति थी | हमने उससे कहा कि या तो साधु मत बनो क्योंकि नये आदमी हो और यदि साधु बनते हो तो यह 'टेंशन की बीमारी' हटा दो | यह मेरा अनुभव है कि पचास-साठ वर्ष के बीच में मानमन्दिर में हजारों लोग रहकर चले गये, उन्हें छोटी-सी बात पर टेंशन हो जाता था और उसी कारण से उन लोगों ने अपने आध्यात्मिक-जीवन का नाश कर लिया | छोटी-सी बात पर 'टेंशन' होने से मनुष्य का साधन नष्ट हो जाता है, मन की शान्ति भंग हो जाती है और उसका भजन-आराधन भी छूट जाता है | इसलिए सतत सावधानीपूर्वक असली आराधना करो |

समत्व से सुसंस्कार

बाबाश्री के श्रीमद्भगवद्गीता-सत्संग (२७/१/२०१२) से संकलित

स्थितप्रज्ञ की परिभाषा में भगवान् ने कहा -

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय ।
सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥

(श्रीगीताजी २/४८)

कोई काम बन गया अथवा नहीं बना, उसमें यदि तुम्हारा मन समान है तो यह समत्व है, योग है | तुम योग में स्थित हो और इस तरह तुम स्थितप्रज्ञ हो जाओगे क्योंकि स्थितप्रज्ञ की परिभाषा में भगवान् ने यही कहा है -

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥

(श्रीगीताजी २/५६)

राग, भय, क्रोध जिसके अन्दर नहीं है, ऐसा मुनि स्थिरबुद्धि कहा जाता है | समत्व के अभ्यास से स्थितप्रज्ञ बन जाओगे | दूसरी बात यह है कि तुम्हारे पाप जल जायेंगे | यह बात हर समय स्मरण रखना चाहिए |

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते ।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥

(श्रीगीताजी २/५०)

दुष्कर्म (पाप) और सत्कर्म(पुण्य) दोनों ही बंधन हैं | पुण्य से भोग मिलता है, भोग पाप से बांधता है और पाप से विपत्ति आती है | पुण्य और पाप दोनों ही बंधन हैं, दोनों को बुद्धियुक्त मनुष्य जला डालता है | इस प्रकार समत्व से एक लाभ यह है कि तुम कर्मों का नाश कर लोगे, स्थितप्रज्ञ बन जाओगे |

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः ।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम् ॥

(श्रीगीताजी २/५१)

जन्म-बंधन से छूट जाओगे, चौरासी लाख योनियों के चक्र से छूट जाओगे | ये सब बातें बार-बार सोचना चाहिए और कहना चाहिए तथा सिखाना चाहिए | चौरासी लाख योनियों के चक्र से छूटना है तो बुद्धियुक्त बन जाओ अर्थात् समत्व का अभ्यास करो | इस तरह से तुम माया से पार चले जाओगे | गुणातीत होने के लिए भी समत्व का होना जरूरी है | समत्व के अभ्यास से पाप तुमको छू भी नहीं पायेगा | यदि कोई विकर्म हो भी जाता है तो वह तुमको छुएगा भी नहीं | समत्व के बहुत से लाभ हैं | ये सब याद रखना चाहिए और बार-बार इसे लोगों को समझाना चाहिए | किसी की बुद्धि यदि काम, क्रोध, लोभ अथवा मोह से विषमता को प्राप्त हो रही है तो उसे समझाना चाहिए | राग,भय और क्रोध जब चले जाते हैं तो भगवान् का आश्रय सिद्ध हो जाता है | मनुष्य कृष्णमय हो जाता है | भगवान् मन में आयें इसके लिए राग, भय और क्रोध से मुक्त होना जरूरी है | समत्व के अभ्यास से मन्मय और मामुपाश्रित हो जाओगे | भगवान् का आश्रय तुम्हे सिद्ध हो जाएगा | इस ज्ञान तप से पवित्र होकर तुम्हारे हृदय में कृष्ण भाव आ जाएगा | ये जितने भी लाभ बताये गये, ये गीता का सार है | इसको बार-बार कहना चाहिए, सिखाना चाहिए | सिखाने वाले से भगवान् प्रसन्न होते हैं | गीता के अंत में भगवान् ने कहा कि उससे अधिक मेरा प्रिय न कोई है, न होगा | परस्पर दो आदमी बात कर रहे हैं, वहां कथा तो नहीं हो रही है परन्तु बोध दिया जा सकता है | दो आदमी आपस में झगड़ रहे हैं तो उनको क्रोध की निवृत्ति हेतु समझा सकते हो कि तुम्हारी बुद्धि विषम हो रही है, इसे समान करो, क्यों चिल्लाते हो ? इससे तुम्हारा नुक्सान है | राग के कारण यदि किसी की किसी में घोर आसक्ति है तो उसे भी समझा सकते हो कि अपनी बुद्धि विषम मत करो | विषम बुद्धि से केवल पाप की प्राप्ति होती है | ये सब समझाना जरुरी है | यही भगवान् चाहते हैं | यही भक्त का लक्षण है | बोधयन्तः परस्परम्- जो परस्पर बोध नहीं करता, वह भक्त नहीं है | यह आवश्यक है कि परस्पर बोध दिया जाए, उससे भगवान् प्रसन्न होते हैं | हम बैठे हैं और दो आदमियों की बुद्धि विषम हो रही है और हम चुप बैठे हैं तो हम दोषी हैं | हमारा कर्त्तव्य है कि हम डूबते को बचावें| यह भगवान् की आज्ञा है | **"कथयन्तश्च मां नित्यम्"** नित्यं माने चौबीस घंटे यह

आदत रखनी चाहिए | ऐसा करने से भगवान् का भजन होता है | भगवान् तुम्हारे हृदय में आकर तुम्हारा अज्ञान दूर करेंगे | गीता के श्लोकों को रट कर केवल रट्टू तोता नहीं बनना है | माँ-बाप का कर्त्तव्य है कि अपनी संतान को समत्व का ज्ञान दें, 'स्त्री' पति को, 'पति' स्त्री को, परिवार में एक दूसरे को बोध (ज्ञान) दें |

"परस्परं बोधयन्तम्" परस्पर में सारा संसार आ गया, किसी की बुद्धि विषम हो रही है तो उसको समान बनाओ, यह सच्ची सेवा है | श्रीमद्भागवत में ऋषभ देव जी ने कहा है - **गुरुर्न स स्यात्स्वजनो न स स्यात् पिता न स स्याज्जननी न सा स्यात् | दैवं न तत्स्यान्न पतिश्च स स्यान्न मोचयेद्यः समुपेतमृत्युम् ||** (श्रीमद्भागवतजी ५/५/१८)

वह गुरु, गुरु नहीं है, उसके सामने शिष्य विषमता में फँसा हुआ है और गुरु देख रहा है | स्वजन, स्वजन नहीं है | सच्चा स्वजन तो वही है जो बुद्धि को समानता में लाकर उसे भगवान् की ओर लगाता है | वह पिता, पिता नहीं है, उसके सामने उसके बेटा-बेटी विषम हो रहे हैं और वह बैठा हुक्का पी रहा है | वह माँ, माँ नहीं है जो बच्चों के अन्दर विषमता आने पर उसे दूर नहीं कर रही है | वह पति, पति नहीं है, उसके सामने स्त्री विषमता की ओर जा रही है और वह उसे भोजन बनाने वाली सेविका समझकर उसके साथ व्यवहार करता है | मृत्यु से छूटने का जो रास्ता नहीं बताता है, वह न गुरु है, न माता है, न पिता है, न बन्धु है, न पति है | रामायण में भी यही कहा गया है - **हेतु रहित जग जुग उपकारी |**

तुम तुम्हार सेवक असुरारी || (रा.उ.का-४७)

भक्त कौन है, वह है जो हेतु रहित परोपकार करता है |

अस सिख तुम्ह बिन देय न कोई |

मात-पिता स्वारथ रत होई ||

माता-पिता भी ऐसी शिक्षा नहीं देते हैं क्योंकि वे स्वार्थी हैं | इसीलिए वे सच्चे माता-पिता नहीं हैं | ये सब बातें समझना चाहिए | केवल हम माता जी बन गए, पिता जी बन गए और संतान से सम्मान चाहते हैं तो वह सब गलत है | समता की सच्ची शिक्षा जो नहीं देते हैं, वे सच्चे माता-पिता नहीं हैं |

स्वारथ मीत सकल जग माहीं |

सपनेहु प्रभु परमारथ नाहीं ||

जहाँ स्वार्थ है, वहां भगवान् नहीं हैं | संसार में जितने मित्र हैं, सब स्वार्थी हैं | सपने में भी वहां परमार्थ की कल्पना नहीं करना चाहिए | इसलिए गीता, रामायण, भागवत आदि शास्त्रों का सार यही है कि हम जो कुछ पढ़ते हैं, सुनते हैं, उसे आचरण में करें और परिवारी जनों से करावें | सदा चौबीस घंटे यही चर्चा होनी चाहिए | इससे भगवान् प्रसन्न होते हैं | परोपकार के लिए कुछ सिखाना नहीं पड़ता | परोपकार करने के लिए धन की आवश्यकता नहीं है केवल अच्छे विचार होना चाहिए और फिर सारा रास्ता भगवान् तैयार कर देता है | सदा परहित की बात सोचनी चाहिए |

परहित सरिस धरम नहिं भाई |

भगवान् ने कहा कि परहित के समान कोई सरस (रसीला) धर्म नहीं है, क्यों, क्योंकि रस ही भगवान् है और भगवान् उदार होता है, कृपण नहीं होता है | भगवान् ने कहा- कृपणा फल हेतवः – भगवान् कृपणता के शत्रु हैं | मनुष्य फल के कारण से स्वार्थी बनता है | फल की इच्छा वाला बहुत नीच होता है| भगवान् ने कहा कि कृपण वही है जो फल की दृष्टि से कार्य करता है, वह स्वार्थी हो जाता है, कृपण हो जाता है | समत्व बुद्धि ही भगवान् है, इसलिए उसकी शरण में जाओ | भगवान् ने समत्व बुद्धि की शरण में जाने को कहा | बुद्धौ शरणमन्विच्छ- जबकि गीता के अठारहवें अध्याय में भगवान् ने कहा-मामेकं शरणं व्रज | मुझ अकेले की शरण में आ लेकिन यहाँ इस श्लोक में कहते हैं कि बुद्धि की शरण में जाओ अर्थात समत्वबुद्धि भगवान् का ही रूप है, समत्व भगवान् का ही स्वरुप है | फल के हेतु वाले कृपण हैं और वे कभी भगवान् की शरण में नहीं आ सकते |

ये सब बातें याद रखना चाहिए और पग-पग पर हर प्राणी को सिखाना चाहिए, चाहे परिवार में बेटा-बेटी हैं, स्त्री-पति हैं, सबको सिखाना चाहिए | संसार का कोई भी सम्बन्धी, सम्बन्धी नहीं है जब तक वह यह सब बातें नहीं कहता सुनता | केवल स्वार्थी है और कृपण है |

विशुद्ध भक्ति 'निष्किञ्चन-भाव'

बाबा श्री के सत्संग (२५ / २/ २००३) से संकलित

श्रीभगवान् ने गीताजी में स्वयं अपने स्वरूप को बताया है –

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः |
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ||

(श्रीगीताजी ६/१५)

भगवान् ने इस श्लोक में अर्जुन को बताया कि मेरा स्वरूप है – शान्ति | जब तुम निरन्तर साधन करोगे, तब मेरे स्वरूप 'शान्ति' को प्राप्त कर जाओगे |

'सतोगुण' में सुखासक्ति और ज्ञानासक्ति होती है | 'ज्ञानासक्ति' – हमें हर चीज का ज्ञान हो जाये; ये जो आसक्तियाँ हैं, ये सतोगुण का दोष हैं; अगर ये दोनों दोष हट जाएँ तो सतोगुण हमें ले जाकर 'विशुद्ध सत्त्व' में पटक देगा, चिन्मय बना देगा; इसलिए इस सुखासक्ति को भी समाप्त करो | भक्तलोग इसे कैसे समाप्त करते हैं, इसका उदाहरण देखो –

चहौं न सुगति सुमति संपति कछू,
रिधि सिधि बिपुल बड़ाई |

भक्त मरने के बाद सद्गति भी नहीं चाहता है, सुमति (अच्छी बुद्धि) भी नहीं चाहता है, उसकी ज्ञानासक्ति भी समाप्त हो जाती है; इससे सतोगुण के मैल हट जाते हैं | इसके बाद संपत्ति आदि तो नीचे की चीजें हैं | भक्त फिर क्या चाहता है ?

हेतु रहित अनुराग राम पद,
बढ़ै अनुदिन अधिकाई |
यह विनती रघुवीर गुसाईं ||

यह है 'सतोगुण' से सतोगुण को मारना, इससे विशुद्ध सत्त्व की प्राप्ति हो जाएगी; इसके भागवत में बहुत प्रमाण हैं | जैसे - एक उदाहरण है – **न नाकपृष्ठं न च सार्वभौमं.....|** (श्रीमद्भागवतजी १०/१६/३७)

'भक्त' सबसे बड़ा क्यों होता है ? निष्किञ्चनता के कारण अर्थात् भक्त अपने 'इष्ट-प्रेम' के अतिरिक्त कुछ भी नहीं चाहता है; राजा भी उसके चरणों में सिर झुकाता है, देवता भी उसके आगे सिर झुकाते हैं | श्रीभक्तमालजी में शिवजी के बारे में कथा है कि एकबार वे पार्वतीजी के साथ कहीं जा रहे थे तो एक जगह उन्होंने किसी टीले को देखकर प्रणाम किया; पार्वतीजी चुप रहीं | थोड़ी देर आगे चलने के बाद शिवजी ने एक दूसरे टीले को प्रणाम किया | अब तो पार्वतीजी से नहीं रहा गया, उन्होंने शिवजी से पूछा कि ये आप क्या कर रहे हैं, इन स्थानों पर तो कोई है ही नहीं, आप किसे प्रणाम कर रहे हैं ? दो जगह आपने प्रणाम किया, वहाँ कोई था ही नहीं, फिर आपने किसको प्रणाम किया ? भगवान् शंकर बोले – "पहले टीले पर मैंने प्रणाम किया था, वहाँ पाँच हजार वर्ष पहले एक भक्त हुआ था और दूसरे टीले पर पाँच हजार वर्ष बाद एक भक्त होगा, इसलिए मैंने वहाँ प्रणाम किया |" 'भगवान् का भक्त' भगवान् से बड़ा होता है | इसीलिए गोस्वामीजी ने लिखा – **"राम ते अधिक राम कर दासा |"** ऐसा नहीं मानोगे तो भक्ति नहीं आएगी | भक्त क्यों बड़ा होता है, इसका कारण समझिये – इन्द्र जिस बात को तरसते हैं, सौ अश्वमेध यज्ञ करने के बाद इन्द्रासन प्राप्त करते हैं; उस इन्द्रासन को भक्त के पास ले जाओ तो कहता है – "न नाकपृष्ठम्" – मुझे इन्द्रासन नहीं चाहिए, इसलिए 'भक्त' इन्द्र से बड़ा हो गया | "न च सार्वभौमम्" – राजा लोग तरसते हैं कि हमें अमुक देश का राज्य मिल जाए | अब राजा तो नहीं रहे तो लोग चाहते हैं कि हम मंत्री बन जाएँ, प्रधानमंत्री बन जाएँ; ये सब भूखे कुत्ते हैं, हड्डी चबाते रहते हैं | जो 'भक्त' होता है, वह इन तुच्छ चीजों को नहीं चाहता है कि मंत्री बन जाएँ, राष्ट्रपति बन जाएँ, राजा बन जाएँ; इसलिए वह राजा से बड़ा है | इन्द्रपद की उसे इच्छा नहीं है, अतः इन्द्र से बड़ा है | यह भक्तों की बात है, हम जैसे लोगों की बात नहीं है, हम लोग तो लड्डू-पेड़ा के लिए घूम रहे हैं | हम लोग भक्त कहाँ हैं ? "न पारमेष्ठ्यम्" – 'भक्त' ब्रह्मा से भी बड़ा है क्योंकि उसे ब्रह्मा का पद भी दो तो वह नहीं लेता है, इसलिए वह ब्रह्मा-शंकर से भी बड़ा है | "न रसाधिपत्यम्" – भक्त को रसातल का राज्य

दे दो, तो उसे भी नहीं चाहता है; इसलिए वह रसातल के अधिपति से भी बड़ा है | "न योगसिद्धी" - भक्त बड़े-बड़े योगियों से बड़ा है क्योंकि उसे योगियों की सिद्धि दो, तो भी वह नहीं लेता है | "अपुनर्भवम्" – ज्ञानियों से भी 'भक्त' बड़ा है क्योंकि उसे मोक्ष दो, तो वह नहीं लेता है; वह तो भगवान् के विरह में केवल उन्हें ही चाहता है | इसलिए 'भक्त' सबसे बड़ा है | सतोगुण में जो दोष है, वह केवल ज्ञानासक्ति है कि हम सब चीजें जानें तथा सात्त्विक सुख में आसक्ति रहती है, लड्डू-पेड़े वाले इन्द्रिय सुख में नहीं बल्कि सात्त्विक सुख में आसक्ति होती है व ज्ञान में आसक्ति होती है, यह सतोगुण का दोष है | आसक्ति तो कहीं भी है, वह दोष है; यह हट गयी तो फिर 'सतोगुण' से सतोगुण को मारा जा सकता है और मनुष्य गुणातीत हो जाता है | भगवान् ने एक बहुत सुन्दर बात कही है कि यदि हमको भोजन करना आ जाए तो केवल भोजन करने से ही हम मुक्त हो जाएँगे लेकिन किसी को भोजन करना नहीं आता है | भगवान् ने कहा है – "अपरे नियताहाराः" – नियत आहार अर्थात् बहुत थोड़ा आहार करना चाहिए, "प्राणान्प्राणेषु जुह्वति" वह बहुत बड़ा यज्ञ है | केवल भोजन करना ही किसी को आ जाए तो वह मुक्त हो जाएगा | एकबार मानमन्दिर में हमारे पास एक सेठजी आये थे, उनके साथ तीसों लोग थे; वे बोले कि हमलोग आज आपके पास ही भोजन करेंगे, उनके पास बहुत तरह के बढ़िया पकवान थे | ठाकुरजी को भोग लगाकर सबको खाने के लिए दिया गया | सेठजी ने केवल एक-दो सेब के पतले-पतले टुकड़े लिए | मैंने उनसे कहा कि तुम भी प्रसाद लो | सेठजी बोले कि मेरे भाग्य में ये सब भोजन नहीं है, यदि मैं इसे खाऊँगा तो मर जाऊँगा क्योंकि मुझे हृदयरोग है, डायबिटीज भी है, डॉक्टरों ने मुझे इस तरह का भोजन करने को मना किया है, मैं दोपहर को केवल दाल का पानी लेता हूँ, कभी-कभी बहुत भूख लगती है तो रोटी के ऊपर का छिलका ले लेता हूँ | यह एक अरबपति आदमी की हालत है, उसके मुँह में भगवान् ने मुँहछीका बाँध दिया, वह खायेगा तो मर जाएगा | इस तरह डॉक्टर भी कहता है कि यदि जीना चाहते हो तो भोजन का जो अंश 'राजस-तामस' बनाता है, उसे छोड़ दो; केवल भोजन का सात्त्विक अंश लोगे तो जीते रहोगे | इसीलिए हमने तालिका (chart) बताई | यह भोजन की शास्त्रीय तालिका है कि 'पृथ्वीतत्त्व' का सात्त्विक रूप 'मन' है, राजस रूप 'माँस' है, तामस रूप 'मल' है | 'जलतत्त्व' का तामस रूप 'मूत्र' है, राजस रूप 'रक्त' और सात्त्विक रूप 'प्राण' है | यदि अन्न राजस, तामस नहीं बनेगा तो सतोगुण 'मन' बना देगा लेकिन हम लोग जो अन्न खाते हैं, उसका ९९.९ प्रतिशत रूप राजस-तामस बनता है, सात्त्विक रूप नहीं बनता है | इसी तरह जल का ९९.९ प्रतिशत रूप राजस-तामस बनता है, रक्त बनता है अथवा मूत्र बनता है, 'प्राण' नहीं बनता है | इसी प्रकार 'तेजतत्त्व' का तामस अंश 'अस्थि' बनता है, राजस अंश 'मज्जा' बनता है किन्तु सात्त्विक अंश 'वाणी' नहीं बनती है | उसी प्रकार 'वायु' का तामस रूप 'अपानवायु' बनती है या राजस रूप 'शरीर में ही चौरासी तरह की वायु बनती है', सात्त्विक रूप 'जीवनशक्ति' नहीं बनती है | यदि भोजन करना ही जीव को आ जाए तो वह 'भगवान्' को पा जाएगा लेकिन जीभ ऐसा नहीं करने देती है | सूरदासजी ने कहा है कि आधा अंश अन्न से भरे तथा आधा अंश अग्नि, वायु से भरे यानि चार रोटी की भूख है तो दो रोटी खा लो, एक रोटी की जगह पानी के लिये तथा एक रोटी की जगह वायु के लिये रखो तो उसका परिपाक होता है, आधा अंश जल और वायु के लिए छोड़ देना चाहिए |

इस प्रकार विशुद्ध भक्तिमयी रहनी से सतत श्रीभगवान् व भक्तों की सेवा-आराधना में समय का सदुपयोग करना चाहिए |

भगवान् के नाम, रूप, लीला, धाम, धामी, जन आदि में अगर जीव को रति पैदा नहीं हुई तो समग्र शास्त्रों का अध्ययन करना केवल श्रम-मात्र है, व्यर्थ है।

श्री राधारानी ब्रज यात्रा 2021

RNI Reference No. 1313397 - Registration No. UP BIL-2017/72945 - Title Code UP BIL-04953
Postal Regd. No. MTR 093/2021-2023

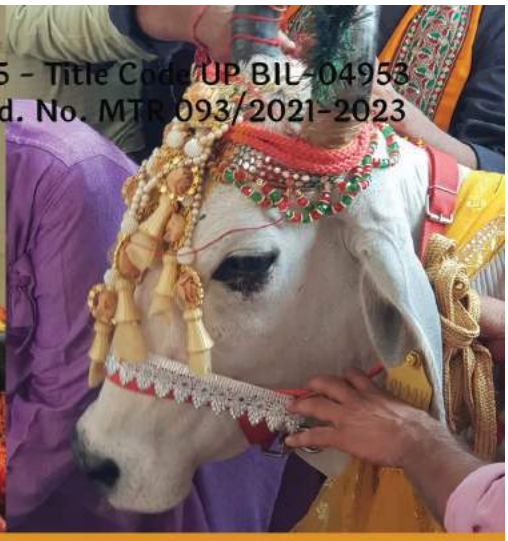

श्री गोपाष्टमी उत्सव, श्री माताजी गौशाला

Adani Total Gas Ltd ने 150 टन गोबर से Compressed Bio-Gas प्लांट लगाने के लिए श्री माताजी गौशाला के साथ से नवरात्रि के शुभ अवसर पर अहमदाबाद स्थित अपने Adani House में एग्रीमेंट sign किया।

श्री मान मंदिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा Gupta Offset Printers A -125 /1, Wazirpur Industrial Area, New Delhi, 110052 से मुद्रित एवं मान मंदिर सेवा संस्थान, गह्वर वन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित